रामाश्रम सत्संग डिजिटल प्रकाशन

सन्त-वचन
(भाग १)

(निर्वाणप्राप्त)
परमसन्त डा० श्रीकृष्ण लाल जी
महाराज के प्रवचनों का संकलन

रामाश्रम सत्संग रजि०
वर्तमान मुख्यालय, ग़ाज़ियाबाद (उ० प्र०)

संत वचन भाग – १

प्रकाशक :
अध्यक्ष एवं आचार्य, रामाश्रम सत्संग, (रजि०)
वर्तमान मुख्यालय, गाज़ियाबाद (उ०प्र०)

सर्वाधिकार सुरक्षित
तृतीय संस्करण १००० (२००९)

मूल्य
मात्र ₹10 (दस रुपए)

प्राप्ति स्थान :
व्यवस्थापक , राम सन्देश मासिक पत्रिका
९-रामकृष्णा कोलोनी, गाज़ियाबाद
२_बी, नीलगिरी 3, सेक्टर 34, नोएडा 201307

मुद्रक :
गायत्री ऑफसेट प्रेस, ए-66, सेक्टर 2, नोएडा उत्तर प्रदेश

संत वचन (भाग I)

विषय सूची

क्रमांक

1. परिचय पूज्य गुरुदेव की जीवनी का सार
2. भंडारा और उसका महत्व
3. स्तुति और निंदा
4. मन, विचार-शक्ति और मुक्ति
5. स्तुति करने का तरीका
6. वास्तविक आनंद कहां है ?
7. वेद का सार है : ईश्वर की महत्ता का ज्ञान
8. चार प्रकार के मनुष्य
9. मनुष्य कि तीन स्वभाविक प्रवृतियां
10. कुछ अन्य महत्वपूर्ण बातें
11. सत्संग के वचन
12. 'उपदेश' लेने के बाद जिज्ञासु का कर्तव्य
13. क्या पुनर्जन्म होता है ?
14. मनुष्य जीवन का प्रवाह और मन के रूप
15. मोक्ष प्राप्ति के लिए अनिवार्य है इच्छाओं का त्याग
16. ब्रह्मलीन महान-आत्माओं से आध्यात्मिक लाभ होता है या नहीं ?
17. मानव जीवन का आदर्श
18. सागर के मोती

संत वचन (भाग I) के विषय में

दो शब्द

संत वचन भाग I का तीसरा संस्करण आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए बड़ी प्रसन्नता हो रही है, जिसका मुख्य कारण प्रेमी सत्संगी भाई बहनों की निरंतर बढ़ती हुई मांग है।

वास्तव में इस पुस्तक की सामग्री ही ऐसी ठोस है जिसमें पूज्य गुरुदेव डॉ० श्रीकृष्ण लाल जी महाराज द्वारा दिए गए प्रवचनों का अत्यंत महत्वपूर्ण संकलन है – जिन लेखों में रामाश्रम सत्संग के सिद्धांतों और क्रिया प्रणाली आदि के बारे में समस्त आवश्यक जानकारी के साथ पूज्य गुरुदेव के विशेष आदेश उपदेश और संदेश भी समाहित है।

पुस्तक के प्रथम संस्करण की प्रस्तुति में पूज्य गुरुदेव के मुखारविंद से दिए गए या हमारे प्रिय भाई डॉक्टर महेश चंद्र जी को लिखवाए गए अमूल्य प्रवचनों का संग्रह है। उन प्रवचनों में से एक प्रतिनिधि चयन, संपादन और प्रकाशन आदि का कार्य संपन्न करने का श्रेय आदरणीय महेश भाई साहब की अटूट श्रद्धा, सूझबूझ और अथक परिश्रम का परिणाम था।

मुझे आशा और विश्वास है कि हमारे नए पाठक इस मूल्यवान संग्रह का पूरा पूरा लाभ उठाकर अपनी जीवन धारा को पूज्य गुरुदेव के बताए मार्ग पर चलकर लक्ष्य की ओर बढ़ने में सफल होंगे।

(डा०) करतार सिंह

आचार्य अध्यक्ष श्री रामाश्रम सत्संग (र)

एस०-ई,२९५, शास्त्री नगर गाजियाबाद

गुरु पूर्णिमा उत्सव

चौधरी भवन गाजियाबाद

दिनांक 21 जुलाई 2005

ॐ

पूज्य गुरुदेव का सर्वोत्तम संदेश

एक प्रेम को नाते को छोड़कर और मैं किसी नाते को नहीं जानता - केवल प्रेम और वह भी निस्वार्थ प्रेम। जो लोग बिना अपने स्वार्थ के मुझे प्रेम करते हैं, चाहे वह सज्जन हैं या दुष्ट, मैं उन्हें प्रेम करता हूं। वे मेरे हैं और मैं उनका। वे सदैव मुझ पर आश्रित रह सकते हैं और वे देखेंगे कि मैं सदैव उनकी सेवा के लिए प्रस्तुत हूं।

(महात्मा श्री कृष्ण लाल जी महाराज)

(जन्म १५-१०-१८९४

निर्वाण १८-०५-१९७०)

परिचय : पूज्य गुरुदेव का

आदरणीय पाठकगण,

भगवान की जब विशेष कृपा होती है तो मनुष्य मात्र के उद्धार के लिए कोई महान आत्मा सतलोक से इस पृथ्वी पर भेजी जाती है जो भूले भटकों को संसार के बंधनों से मुक्त कराके परमार्थ की राह पर लगाती है और मनुष्य जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होती है। इन्हीं महान आत्माओं को संत, परमसंत, गुरु, सतगुरु आदि नामों से पुकारते हैं। इनका जीवन ही दूसरों के कल्याण के लिए होता है, इनकी रहनी सहनी और लौकिक व्यवहार दूसरे के लिए होते हैं और जो कुछ इन के श्री मुख से निकलता है वह अनमोल वाणी होती है।

भाग्यशाली हैं वे लोग जिन्हें जीते जी ऐसे महान विभूतियों के श्री चरणों में बैठने का और उनके कृपाभाजन होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। ऐसे ही महान विभूतियों में से एक महापुरुष महात्मा रामचंद्र जी महाराज, फतेहगढ़ (उ०प्र०) में प्रगट हुए थे। यह महापुरुष अध्यात्म विद्या के अथाह भंडार थे। जीवन भर उन्होंने ब्रह्मविद्या का प्रचार किया और ना मालूम कितने भूले भटके को सन्मार्ग पर लगाया। आपका चलाया हुआ मिशन - रामाश्रम सत्संग के नाम से विख्यात है, जिसकी शाखाएं उत्तरी भारत के प्रमुख नगरों में आज भी आपके मिशन को पूरा कर रही है। आपका जीवन चरित्र प्रकाशित हो चुका है, जो रामाश्रम सत्संग की किसी भी शाखा में उपलब्ध हो सकता है।

महात्मा रामचंद्र जी महाराज के निर्वाण के उपरांत उनका आध्यात्मिक कार्यभार उनके परमप्रिय गुरुमुख शिष्य परम संत डा० श्री कृष्णलाल जी महाराज ने संभाला।

जब कोई महान आत्मा संसार के उद्धार के लिए सचखंड से अवतरित होती हैं तो ब्रह्मांड से ऐसी आत्माओं को जो पिछले जन्म के सच्चखंड तक नहीं पहुंची हैं और किसी वस्तु की इच्छा के कारण ब्रह्मांड में ठहरी हुई हैं और आगे का रास्ता रुका हुआ हैं, अपने साथ ले आती हैं। भगवान राम के साथ लक्ष्मण जी आए, कबीर साहब के साथ धनी धर्म दास जी, गुरु नानक देव जी के साथ गुरु अंगद देव जी, परमहंस राम कृष्ण जी के साथ स्वामी विवेकानंद जी, श्री शिवदयाल सिंह साहब के साथ राय साहब शालिग्राम जी तथा सरदार जयमल सिंह जी आदि आदि। यही आत्माएँ गुरुमुख होती हैं और गुरु के चोला छोड़ने के बाद उनके मिशन को पूरा करती हैं और सिलसिले को आगे चलाती हैं। यही बात महात्मा रामचंद्र जी महाराज और पूज्य डॉक्टर साहब के साथ रही। यहां पूज्य डॉक्टर साहब के जीवन का संक्षिप्त परिचय देना मैं अपना धर्म समझता हूं।

पूज्य डॉक्टर से किस लाल जी महाराज (सिकंदराबादी)

<u>का संक्षिप्त परिचय</u>

पूज्य डॉक्टर श्री कृष्ण लाल जी का जन्म 15 अक्टूबर सन १८९४ में एक सुप्रतिष्ठित उच्च भटनागर कायस्थ कुल में हुआ। आपकी पवित्र जन्मभूमि सिकंदराबाद, जिला बुलंदशहर (उ०प्र०) हैं। आपके पिता का नाम पूज्य श्री भगवत दयाल और तथा माता जी का नाम पूज्या श्रीमती कृष्णा देवी था। अपने भाई बहनों में आप सबसे ज्येष्ठ हैं। आपके तीन भाई और तीन बहने थी।

बाल्यावस्था से ही आप स्वतंत्र स्वभाव के, सरल प्रकृति के और प्रेमी तथा बाहर से देखने में हठी स्वभाव के प्रतीत होते थे।

यद्यपि उनको हठी कहना सर्वथा अनुचित है क्योंकि जिस बालक की इच्छाशक्ति और मनोबल अन्य बालकों की अपेक्षा अधिक तीव्र और बलवान होते हैं उन्हें बाल्यावस्था में लोग हठी कह दिया करते हैं। बचपन से ही आपको भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति बहुत प्रिय थी और लगभग ४ वर्ष की आयु से ही उनकी याद में आप अकेले में बैठ कर रोया करते थे। बहुधा स्वप्न में भगवान श्री कृष्ण के उनहें दर्शन होते रहते थे। भविष्य में होने वाली बातें स्वप्न में ज्ञात हो जाती थी। एक बार जब आप नवी कक्षा में पढ़ते थे, और परीक्षा के कारण कुछ घबराए हुए थे तो भगवान कृष्ण ने कृपा करके आप को पर्चा भी बतलाया था। आपको भगवान के यह पवित्र दर्शन तब तक होते रहे जब तक आप अपने गुरुदेव की शरण में नहीं आए थे।

आपके पितामह श्री वृषभानु जी बहुत ही सीधे स्वभाव के थे और बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति के मनुष्य थे। कुछ जमीनदारी थी आपके जिसकी आय से घर का काम का चलता था। आपके पिताजी सार्वजनिक निर्माण विभाग (P.W.D.) में ओवर्सियर के पद पर काम करते थे।

धार्मिक प्रवृत्ति आपको अपने वंश में अपने पितामह, पिताजी तथा माता जी से मिली थी। आपकी पितामह ने राय साहब परम संत शालिग्राम जी साहब व परम संत सरदार सावण सिंह साहब से उपदेश लिया था। आपके पिताजी ने युवावस्था में ही उपदेश ले लिया था। किंतु उस ओर उनकी प्रवृत्ति स्थाई न रह सकी। आपकी माताजी बहुत सीधी-सादी नेक और धार्मिक प्रवृत्ति की थी। पूजा पाठ में अधिक समय व्यतीत करती थी। उन्होंने परम संत महाराज सरदार सावण सिंह जी साहब (व्यास गद्दी) से उपदेश लिया था। उसके बाद उन्होंने अपने आप को गृहस्थी के मामलों से बिल्कुल अलग कर लिया था। हर समय उन्हीं के ध्यान में रहती थी और अंत समय तक उनकी यही हालत रही। आपने जेष्ठ पुत्र डॉक्टर साहब को वह बहुत प्रेम करते थे। कुछ काल के उपरांत पिताजी ने भी उनकी शरण ले ली थी।

संत वचन भाग – १

पूज्य डॉक्टर साहब की प्राथमिक शिक्षा फतेहगढ़ (उ०प्र०) में हुई थी जहां से आप ने मैट्रिक की परीक्षा पास की। आपके पिताजी उन दिनों फतेहगढ़ में ही तैनात थे। यहां की एक मुख्य घटना उल्लेखनीय हैं जो उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार है:--

" अक्टूबर सन 1915 की घटना है। सेवक विद्यार्थी जीवन में था और गवर्नमेंट स्कूल फतेहगढ़ में दसवीं कक्षा में पढ़ा करता था। एक दिन सेवक के पिताजी ने एक चेक खजाने से रुपया लाने के लिए दिया। जब सेवक खजाने में चेक लेकर क्लर्क साहब के पास गया और उन्होंने सेवक की ओर ध्यान से देखा तो आनंद की एक लहर सारे शरीर में इस तरह फैल गई जैसे सेवक के जीवन में इस प्रकार का यह पहला अवसर था। घबरा गया और आँखें नीची कर ली। कुछ देर में वह हालत जाती रही। दो तीन घंटे बाद जब सेवक खजाने से रुपया लेकर वापस आ रहा था तब बरामदे में उन्हीं क्लर्क साहब को टहलते पाया। सेवक ने उनकी ओर फिर देखा , ज्यो ही आंख का मिलना था फिर वही हालत हो गई, जो पहली बार हुई थी। लेकिन इस बार अकेली आनंद की लहर ही नहीं थी बल्कि प्रेम भी शामिल था जो अपनी ओर खींच रहा था। सेवक के मन में विचार उठा कि क्या यह सज्जन कोई मिसमराइजर (Mismeriser) है ? तबीयत पास बैठने और बातचीत करने को चाहती थी, लेकिन हिम्मत नहीं हुई और दिल पर काबू कर करके बिना बातचीत किए हुए घर चला गया। दो-चार दिन बाद परेड परेड ग्राउंड के मैदान में सेवक शाम को एक जगह बैठा हुआ था। थोड़ी देर बाद वही सज्जन टहलते हुए वहां आ गए जहां सेवक बैठा हुआ था।

सेवक ने उठकर नम्रता पूर्वक नमस्कार किया और पूछा कि क्या आप किसी विद्यार्थी से मिलना चाहते हैं जिसको कि मैं बुला लाऊं जो वहां खेल रहे हैं ?" आपने कहा – " नहीं, हमें किसी विद्यार्थी से नहीं मिलना है, हम तो सिर्फ हवा खोरी (वायु सेवन) के लिए इधर आ निकले हैं। यह कह कर एक तरफ चल दिए और सेवक तब भी आपसे बातचीत न कर सका।

उसी रात को स्वप्न में एक वृद्ध फकीर दिखाई दिए जो कभी ओम कभी अल्लाह और कभी राम का आवाज लगाते थे। शरीर पर कभी सुनहले कपड़े, कभी रेशम का, कभी टाट के कपड़े और कभी येगलियां थी और कभी बिल्कुल नंग धड़ंग। आदर भाव से सेवक ने उनके चरण छूने चाहे तो उन्होंने यह कह कर कदम हटा लिए कि हम दुनिया के कुत्तों से पांव नहीं छुआते। फिर सेवक को बचपन की हालात बतलाने लगे और नसीहत करने लगे कि क्या करने आया था और क्या करने लगा। अभी वक्त है संभल जा। सेवक उनके पास से हटकर दूसरी तरफ चला गया लेकिन जहां जाता वहां पर दिखाई देते थे। उनके कपड़े थे, वही सदा (आवाज लगना) था और वही नसीहत (शिक्षा)। सारी रात यही हालत रही। सुबह को जब सेवक उठा तो सर तबीयत परेशान थी क्योंकि सेवक को अक्सर वही स्वप्न दिखाई देते थे जो आगे चलकर घटनाओं की सूरत में बदल जाते थे और सत्य सिद्ध होते थे।

वह रविवार का दिन था और सेवक के साथी हर रविवार को एक संत के पास आंतरिक अभ्यास करने जाया करते थे जिनकी वे बहुधा प्रशंसा किया करते थे। सेवक उनकी बात सुनकर हंसी उड़ाया करता था। उसी दिन उन्होंने सेवक से पूछा - क्या तुम भी हमारे साथ चलोगे ? इस विचार से की तबीयत बहलेगी, सेवक भी उनके साथ चल दिया जब महात्मा जी के मकान में पहुंचा तो वह देखकर अचरज हुआ कि वे वही सज्जन थे जिनके दर्शन सेवक ने खजाने व् परेड ग्राउंड पर किए थे। आप जमीन पर बिछी चटाई पर बैठे थे। सेवक को देखकर आप ने कहा – "श्रीकृष्ण ! भाई तुम कैसे आए ?" सेवक ने निवेदन किया "मैंने एक स्वप्न देखा है जिसके कारण मैं परेशान हूँ" और ताबीर (स्वप्न का क्या आशय है) जानना चाहता हूँ।

आपने कहा – "यह ख्वाब नहीं वाका (सत्य) है। मैं मुद्दत से तुम्हारी तलाश में था। तुम मेरी बिछड़ी हुई आत्मा हो। मैंने तुमको पहली मर्तबा खजाने में देखा, पहचान लिया। मैं तुमको कई रोज से बुला रहा था लेकिन तुम नहीं आए। रात को जो फकीर तुमने देखा वह

मैं ही था, तुमको बुलाना मकसूद था (मैं तुम्हें बुलाना चाहता था) । ताबीर (स्वप्न का आशय) यह है कि मैं तुम्हारा हूं, तुम मेरे हो। अब तुम यहां से कहीं और नहीं जा सकते।

सन ।९।6 में पूज्य डॉक्टर साहब का विवाह हो गया। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती चंदा देवी अत्यंत सुशील पवित्रता और धार्मिक प्रवृत्ति की थी। जिन सज्जनों को उनके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ उनका कहना है कि वे अत्यंत शांत प्रकृति की महिला थी बहुत कम बोलती थी और साक्षात लक्ष्मी थी। आपकी ऽ संतानें थी जिसमें दो जेष्ठ पुत्रियाँ तथा तीन पुत्र थे। सभी विवाहित हैं तथा सुशील और नेक हैं और अपने-अपने घर खुश हैं।

मैट्रिक पास करने के बाद पूज्य डॉक्टर साहब ने बिसातखाने की एक छोटी सी दुकान की। किंतु उसमें मन न लगा। फिर स्कूल में कुछ दिनों लिपिक पद पर रहे परंतु वहां भी तबीयत ना लगी। अपने गुरुदेव के आदेशानुसार सन ।९।९ में आप डॉक्टरी पढ़ने आगरे चले गए। डॉक्टरी पास करने के बाद कुछ दिनों आपने सरकारी नौकरी की। उसके उपरांत सिकंदराबाद उत्तर प्रदेश में अपनी निजी प्रैक्टिस शुरू कर ली। आरम्भ में बहुत आर्थिक कठिनाई हुई (जिसकी वजह कुछ नई प्रेक्टिस थी और गुजारे भर के लिए मिल जाता था) एक बार आपको यह कहते हुए सूना गया कि "तुम्हे परमात्मा दोनों समय रोटी तो पेट भर कर दे रहा है, हमारा तो ऐसा भी वक्त गुजरा है जब कई दिनों तक एक समय लगभग उपवास ही करना पड़ता था।

धर्मशास्त्र को आपने कभी नहीं छोड़ा। आपने व्यवहारिक जीवन में सदा सत्य अहिंसा, सदाचार, परोपकार और दीन दुखियों, गरीबों तथा विधवाओं की सेवा में लगे रहे। पूज्य डॉक्टर साहब की रूहानी तालीम बचपन से ही आ प्रारंभ हो गई थी। सन ।९।५ में आपने परम संत सतगुरु महात्मा रामचंद्र जी महाराज की शरण ग्रहण कर ली थी। आपको अपने गुरुदेव से इतना अधिक प्रेम था कि बाल्यावस्था में ही देखने वालों को उस प्रेम की झलक प्रत्यक्ष प्रतीत होती थी । जब कोई चीज घर में खाने को मिलती थी तो उसे रख लेते थे और

जब गुरुदेव के पास जाते थे तो सरल स्वभाव से उनके साथ बैठ कर खाते थे। यदि कोई शारीरिक कष्ट आता तो साधारण बालकों की तरह अपने माता-पिता की याद ना करके अपनी गुरुदेव को याद किया करते थे।

सन १९१५ में आपके गुरुदेव ने आपको ध्यान भी शिक्षा का काम सुपुर्द कर दिया और उसी समय जितने खानदानी अथवा अध्यात्मिक परंपराओं से उन्हें इजाजत थी सब अता फरमाई। सन १९१५ में इजाजत बैत (उपदेश) करने की अनुमति प्रदान की। और सन १९२२ में इजाजत ताअम्मा (सर्वोच्च और संपूर्ण इजाजत) देकर यह हुकुम दिया कि "मेरा काम करो और मेरे मिशन को भूले भटके और जरूरतमंदों तक पहुंचाओ"। अमर तुमने मेरे काम में कोताही (आलस्य) की तो आकबत (परलोक) में दामनगीर होऊँगा।"

बहुधा जब डॉक्टर साहब के पूज्य गुरुदेव उन पर विशेष प्रसन्न होते तो कहा करते थे कि "मैं तुम्हें दुनिया और दीन की सब चीजे दे सकता हूं, जो चाहे मांग लो"। किंतु डॉक्टर साहब ने शिवाय गुरु प्रेम के और कुछ नहीं चाहा। अनामी पुरुष का दर्शन कराते समय महात्मा जी ने डॉक्टर साहब से कहा कि यही असल है, इसी में अपने आप को लय कर दो। सन १९२२ में डॉक्टर साहब को बुलाकर आदेश दिया कि "मुझे जो कुछ देना था सब कुछ तुम्हें दे चुका, मेहनत करो सब कुछ तुम पर खुल जाएगा। सदा अपने भाइयों की शिक्षा का ध्यान रखना। अगर मेरे काम को फैलाया तो मैं तुम्हें दीन और दुनिया दोनों दूंगा"।

तभी से पूछ डॉक्टर साहब अपने गुरुदेव की आज्ञा का पालन निरंतर करते चले आ रहे हैं और उन्हीं के चरणों चिन्हों पर चलकर उनका दिव्य संदेश भूले भटके और परमार्थ के जिज्ञासुओं तक पहुंचा रहे हैं। जब तक गृहस्थ में रहे तब तक गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए इस पवित्र मिशन को चलाते रहे। सन १९५० में आपकी धर्मपत्नी जी का देहांत हो गया। उसके दो-तीन साल बाद आपने दुकान छोड़ दी और सारा समय अध्यात्मिक शिक्षा के कार्य

में व्यतीत किया, यद्यपि आपकी इस समय वृद्धावस्था है और शरीर दुर्बल तथा अस्वस्थ रहता है किंतु अपने गुरुदेव के मिशन की पूर्ति की लगन में ऐसी दशा में भी दूर दूर जाकर आध्यात्मिक शिक्षा का प्रसार और प्रचार करते रहे। आप वर्तमान काल में संतमत के महान आचार्य हैं और रामाश्रम सत्संग के अध्यक्ष हैं, जिसका मुख्य केंद्र सिकंदराबाद जिला बुलंदशहर उत्तर प्रदेश है।

पूज्य डॉक्टर साहब के सारे उपदेश और प्रवचन संकलित नहीं हो सके हैं। जो उपदेश आपने लिखित रूप में दिए या जो मौखिक प्रवचन संकलित हो सके, वह एकत्रित कर लिए गए हैं। प्रस्तुत पुस्तक उसी संकलन का प्रथम भाग है। जिसमें सन 1954 से लेकर 1958 तक के उपदेश और प्रवचन छापे गए हैं। इससे आगे का संकलन अगले भागों में छापा जाएगा।

मैं आशा करता हूं कि इन अनमोल वचनों को जो भी सज्जन ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे और श्रद्धा तथा विश्वासपूर्वक इन पर अमल करेंगे, वे प्रभु कि राह में बेखटके तेजी के चलते जाएंगे और एक न एक दिन सच्चे मालिक के दरबार में प्रवेश पाने के अधिकारी होंगे।

सागर का मोती

निर्गुण व सगुन में कोई भेद नहीं है। जो परमात्मा को अकर्मक और गुणों से अलहदा समझ कर ध्यान किया जाता है तब वह निर्गुण यानी शुद्ध ब्रह्म है। और जब उसका ध्यान गुणों सहित किया जाता है (जैसे पैदा करने वाला पालने वाला मारने वाला आदि) तो वह सगुन कहलाता है। पानी की कई शक्लें हैं, कभी वह भाप की शक्ल में होता है, जब दिखाई नहीं देता और कभी वह बर्फ की शक्ल अख्तियार कर लेता है।

भंडारा और उसका महत्व

सनातन धर्म के मानने वाले हिंदुओं में यह प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है कि वर्ष के एक विशेष भाग में अपने पूर्वजों की आत्माओं का आवाहन करते हैं ।

उन दिनों पितृलोक पृथ्वी के निकट होता है। पितृ लोक उस लोक को कहते हैं जहाँ इस पृथ्वी की विगत आत्माएं अपनी-अपनी कर्मानुसार कुछ काल के लिए अपने विचारों में घूमती रहती हैं। इस पुण्य कार्य के लिए ब्राह्मणों (जो ब्रह्म विद्या को जानने वाला हो) का आश्रय लिया जाता है। उन्हें अच्छे-अच्छे स्वादिष्ट भोजन कराए जाते हैं, जिससे उस भोजन का अंश वह उन आत्माओं तक पहुंचा दे। यह इसलिए किया जाता है कि जिन विचारों में वे विगत आत्माएं फंसी हुई हैं उनसे उनकी मुक्ति हो जाए या पुनः इस पृथ्वी पर जन्म धारण करें। इसी को श्राद्ध कहते हैं और जिन दिनों यह पर्व मनाते हैं, उसे पितृपक्ष कहते हैं।

यह भी एक रीति चली आती है कि श्राद्ध, केवल पुत्र या नाती ही कर सकता है, लड़की नहीं कर सकती। इसका कारण यह जान पड़ता है कि पुत्र अपने तथा अपने पिता के संस्कारों की समानता के कारण उस कुल में जन्म लेता है। उन संस्कारों के कारण ही शायद ऐसा कहा गया है कि बिना पुत्र के मोक्ष नहीं होती। मुसलमानों में पितृलोक को 'बरज़ख' कहते हैं और जब वहां से आत्माएं या तो ऊंचे लोको में भेज दी जाती हैं या फिर इस दुनिया में वापस भेज दी जाती हैं, उसे रोजे जजा' कहते हैं।

संतो ने इस पुण्य पर्व का नाम 'भंडारा' रखा है और मुसलमान सुफी उसे 'उर्स' कहते हैं। इस दिन शिष्य अपने वंश के पूर्वजों की आत्माओं का आह्वान करते हैं। वर्ष भर की अपनी आध्यात्मिक कमाई (तपस्या, रियाज़त) उन्हें अर्पित करता है, गरीबों को भोजन कराता है, मिठाई फल-फूल आदि प्रसाद के रूप में पेश करता है। सब अध्यात्मिक भाई

मिलकर उस परमपिता परमेश्वर के दरबार में प्रार्थना करते हैं कि इन सब का फल गुरुदेव को तथा पूर्वजों की आत्मा को पहुंचे और हम सबको शक्ति दे कि सन्मार्ग पर चलकर उनके श्री चरणों में आश्रय पा जाएं। उन विगत महान आत्माओं से प्रार्थना करते हैं कि हम सब पर आपकी अपरिमित कृपा सदा छाई रहे और हमें ऐसी शक्ति प्रदान हो जिसके द्वारा आप के दिखाए हुए सन्मार्ग पर डटे रहे और सांसारिक बखेड़ों से बचे रहकर अपने काम में लगे रहे।

यह पर्व संतो और सूफी उनमें बड़ा पवित्र माना जाता है। तमाम सत्संगी लोग दूर-दूर से रुपया खर्च करके मुसीबतों का सामना करते हुए, इस उत्सव पर सम्मिलित होते हैं और भविष्य के लिए टेक बांधते हैं कि पापों से बचेंगे। आगे की उन्नति के लिए नए साधक सोचते हैं कि जिससे अपनी व्यक्तिगत उन्नति के साथ-साथ आपस में मिलकर और एक विचार होकर उस प्रभु से दुआ करते हैं और इसके फलस्वरूप उस मालिक की मौज रहम और कृपा की धार तेजी के साथ जारी हो जाती है।

जिसके प्रभाव से पिछली सुस्ती और काहिली जाती रहती है और भविष्य के लिए नवीन शक्ति का संचार होता है जो अपने इस कार्य में बड़ी सहायक होती है । एक नया उत्साह पैदा होता है ।

सत्संग कराने वाले महापुरुष इन दिनों प्रकाश और फैज़ खींच-खींच कर वायुमंडल में फैलाते रहते हैं जिससे वहां का सांसारिक वातावरण शुद्ध होता रहे। कृपा की अविरल धारा प्रवाहित होने लगती है जिसका प्रभाव हर मनुष्य और हर वस्तु पर पड़ता है जो वहां मौजूद होती है। वहां की भोजन का भी प्रभाव मन पर पड़ता है जिससे मन का मैल दूर होता है, वह शुद्ध और पवित्र होकर परमात्मा की ओर झुकने लगता है। भंडारे के प्रसाद में भी वही प्रभाव होता है। जो लोग वहां उपस्थित नहीं होते उनके लिए प्रसाद को लोग बड़ी श्रद्धा से दूर दूर ले जाते हैं। इसी

कारण प्रसाद का बड़ा आदर किया जाता हैं इन्हीं महत्त्वपूर्णलाभों को आधार बनाकर पूर्व संतों और सूफियों ने प्रतिवर्ष भंडारा बनाने की रीति चलाई हैं।

सागर के मोती

- हर समय यह ख्याल रखो कि ईश्वर हर पल तुम्हारे साथ हैं और वह तुम्हारा सच्चा बाप हैं। प्यार से उसका पवित्र नाम लेते रहो और उसकी मौज में रहो।
- हर मनुष्य के व्यवहार से पता चल सकता हैं कि उसकी कितनी प्रगति हुई हैं। यदि किसी को क्रोध आता हैं तो यह स्पष्ट हैं उसके अंतर में अहंकार छिपा हुआ हैं। जितना अधिक मनुष्य क्रोधी होगा, उतना ही उसके अंदर में अहंकार छिपा हुआ होगा।

स्तुति और निंदा

अगर तुम किसी को स्तुति करना चाहते हो तो अपनी गुरुदेव या मालिक की करो और अगर निंदा करना चाहते हो तो अपनी करो। गुरु या मालिक की स्तुति करने से तुम्हारी ख्यालात ऊँचे होंगे और जितनी अच्छी बातें और जितने अच्छे गुण हैं वह खुद-ब-खुद खैंच शक्ति के प्रभाव में आकर तुम्हारी तरफ आने लगेंगे और तुमको अपना केंद्र बनाते जायेंगे। किसी दिन खायाल के असर की तासीर से तुम में वह गुण आ जाएंगे जो तुम हासिल करना चाहते हो और जो तुम्हारी जिंदगी का लक्ष्य है।

गुरु इच्छित आदर्श का नाम है जो तुम्हारे दिमाग में है और जो तुम बनना चाहते हो। गुरु के जिस्म के ख्याल से तुम्हारा ख्याली आदर्श यानी सुक्ष्म गुरु बार-बार तुम्हारे ख्याल में आवेगा और उस बार-बार के ख्याल से आत्मा की मदद लेकर तुम अहिस्ता अहिस्ता वही बनते जाओगे। यह एक ऐसी सच्ची बात है कि जिसमें शंका करने की गुंजाइश नहीं है। जब तुम अपनी निंदा करोगे तो जितनी बुरी बातें हैं जिनकी वजह से तुम अपनी निंदा करते हो सामने आएंगी और अगर उनसे तुम नफरत करते हो तो वे अहिस्ता अहिस्ता दूर होती जायेंगी। और एक वक्त आएगा जब तुमको ख्याल भी न रहेगा कि फलां ऐब तुम में था और उसका संस्कार कतई तौर से नष्ट हो जाएगा।

जिसको तुम प्यार करते हो उसको तुम खींचते हो और स्वयं उस तरफ खिंचते हो। जिससे तुम नफरत करते हो उससे तुम अपने को दूर हटाते हो और साथ ही साथ उसको अपने पास से दूर धकेलते हो। गुरु या मालिक तमाम खूबियों का केंद्र और भंडार है। चूँकि वह इच्छित लक्ष्य है इसलिए जितनी भलाइयों को तुम समझ सकते हो और जिनको तुम नहीं समझ सकते वह सब उसमें और उसकी तारीफ व स्तुति करने से वह तुम्हारी तरफ खिंचने लगेगी । इसी तरह तरह जब तुम अपने में बुराई देखोगे, अपनी निंदा करोगे, उस बुराई से नफरत करोगे तो वह

बुराई तुम्हारा साथ छोड़ने लगेगी। निंदा अपने ऐबों की की जाती है। कभी भूल कर भी अपनी निंदा मत करो। तुम तो उनके अंश हो, तुम में बुराई कैसी ? अगर तुम बुरे हो तो वह भी बुरा है। और जब वह गुणों का भंडार है तो तुम बुरे कैसे हो सकते हो ?

साफ और स्वच्छ नीला आसमान छाया हुआ है। कभी बादल के टुकड़े आ जाते हैं तो नीला आसमान छुप जाता है। थोड़ी देर बाद बादल के टुकड़े गायब हो जाते हैं और वही आसमान शान के साथ दिखाई देने लगता है। तुम्हारी आत्मा पर माया के कुछ पर्दे आ गए हैं जिनके प्रभाव से तुमसे न करने वाली बातें हो जाती हैं लेकिन यह सब अस्थाई है। उनसे नफरत करो और अपने को उनसे दूर रखो। लगातार कोशिश करते रहो पर्दे हटते जाएंगे।

निंदा भी, सिर्फ शुरू में ही की जाती है कि तुम पाक साफ हो जाओ और तुम पवित्र बनने लगो तो अपने को सराहो और उस गुरु या मालिक को धन्यवाद दो जिसने तुमको अपनी शरण में ले लिया।

दिल को आजारे मोहब्बत के मजे आने लगे।
उसके मैं कुर्बान जिसने दर्द पैदा कर दिया॥

अब सिर्फ गुरु या मालिक के स्तुति से काम रखो यहां तक कि गुरु व मालिक के अस्तित्व को तुम अपना अस्तित्व अनुभव करने लगो। अब स्तुति भी बंद हो जाएगी क्योंकि काम पूरा हो गया और उसकी जरूरत नहीं रही। स्तुति करने रहने से परमात्मा, जो तुम्हारा ध्येय है, उसकि याद बराबर होती रहेगी। और ख्याल बराबर उस तरफ रहेगा जिसकी वजह से तुम रोज ब रोज अच्छे बनते जाओगे। गुरु व मालिक इंसान को नहीं कहते। वह सद्गुणों का समूह और इच्छित आदर्श है जो तुम्हारे दिमाग में है और जो तुमको बनना है।

अपनी निंदा करने से अपनी कमजोरी और बुराइयों की तुम को याद आएगी और क्योंकि बहुत तुम उनसे घृणा करते हो, अहिस्ता अहिस्ता वह तुम्हारा पीछा छोड़ देगी और इन दोनों युक्तियों से तुम्हारी आत्मा के ऊपर से खिलाफ हट जाएंगे और आत्मा असली हालत में प्रकाशित होगी और तब परमात्मा का प्रेम जो उसकी असलियत और जान है, चमक उठेगा। जिससे बाकी मैल भी बिल्कुल इस तरह दूर हो जाएगा जैसे एक चिंगारी जंगल के जंगल को साफ कर देती है। तुम कृतकृत्य हो जाओगे और ऐसी स्थिति प्राप्त कर लोगे जिसमें शांति ही शांति है और सब तरफ से सुख ही सुख है।

दूसरों की निंदा या गुणों का बखान करने से दूसरों की बुराई अपने में प्रवेश कर जाती और आदमी मंजिले मकसूद (ध्येय) से बहुत दूर जा पड़ता है। यह बहुत ही बुरी आदत है और उसमें हमेशा दूर रहना चाहिए। अगर किसी में ऐब है तो उसको अपने में दाखिल मत होने दो। क्या तुम नहीं देखते कि जो कोई किसी का कोई चीज देता है तो पहले खुद ही जमा कर लेता है तब ही दे पाता है ? अगर तुम किसी की बुराई करते हो तो तुम पहले वह बुराई अपने में जमा कर लेते हो और अपने को बुरा बनाते हो। औरों की निंदा भूलकर भी ना करो, यह संतों और महात्माओं का कतई हुकुम है कि बुराई करने वाला परमार्थ का अधिकारी नहीं हो सकता।

हजरत मोहम्मद साहब के पास एक ही चोगा था जो उनके इस्तेमाल में रहता था जब निर्वाण का समय निकट आया, आपने अपने खास खलीफाओं को बुलाया और कहा कि हम यह चोगा आप में से एक साहब को देना चाहते हैं। बतलाइए आप इसका क्या बदला देंगे ? हर एक ने अपने ख्यालात के मुताबिक अर्ज़ की। एक साहब ने फरमाया कि मैं उम्र भर खिदमते खल्क (लोक सेवा) करता रहूंगा। दूसरे साहब ने कहा कि मैं इंतहा इबादत (पूजा) करूंगा। तीसरे ने कहा रियाजत (अभ्यास) करूंगा, एक और साहब ने

फरमाया कि मैं इसके बदले उम्र भर मजहबी ख्यालात का प्रचार करता रहूंगा। गरजे कि हर साहब ने कुछ ना कुछ जो खयाले शरीफ में फरमाया।

आखिर में हजरत अबूबक्र साहब सिद्दीकी खलीफा अव्वल ने फरमाया कि हुजूर "अगर यह चोगा मुझको नक्शा जाए तो मैं तमाम उम्र इसी तरह खल्के खुदा (इश्वर कि सृष्टि) की ऐब पोशी (ऐब ढंकना) करूंगा, जिस तरह यह चोगा जिस्म की पर्दापोशी (ढकना, छिपाना) करता है" हजरत ने खुश होकर यह चोगा उनको इनायत फरमाया। इससे ज्यादा ऐबपोशी की बरकत के बारे में और क्या कहा जा सकता है ?

मन विचार शक्ति और मुक्ति

यह तुम्हारा शरीर असल में तुम्हारे मन की धाराओं के घनी शक्ल है। जैसा तुम्हारा मन है वैसा शरीर है। जैसे तुम्हारा मन बदलता है वैसे ही तुम्हारा शरीर भी बदल जाता है। बिना पूछे लोग बतला सकेंगे कि तुम्हारे विचार कैसे हैं और तुम्हारा व्यवसाय क्या है। क्या चिड़ीमार को देखकर तुम कोई ख्याल पैदा नहीं होता यह कोई निर्दई आदमी है या मछली पकड़ने वाले को देख कर उसके विचारों की दुर्गंध तुमको अनुभव नहीं होती ? क्या किसी संत को देखकर तुम्हारे हृदय में प्रेम की लहर जोर नहीं मारने लगती और उसे आदर देने के लिए हाथ नहीं उठ जाते ? जानवरों और बच्चों के दिल साफ होते हैं इसलिए उन पर इन विचारों का ज्यादा असर पड़ता है।

बच्चे को प्रेम से देखो उसके लिए अगर तुम्हारे दिल में प्रेम है तो बिना बुलाए तुम्हारे पास चला जाएगा और अगर तुम्हारे दिल में नफरत है तो तुम्हारी सूरत देख कर भाग जाएगा या रोने लगेगा और बुलाने पर पास नहीं आएगा। मालिक के सच्चे भक्तों के दिल में हर एक प्राणी के लिए अथाह प्रेम होता है जिसके प्रभाव से भयंकर से भयंकर हिंसक पशु भी

संपर्क में आकर अपना क्रूर स्वभाव छोड़ देते हैं। क्या तुम नहीं जानते कि शेर अपनी मांड में शेरनी का दूध लेते हुए भी पास चुपचाप आदर पूर्वक बैठ गया था। सांप चुपचाप पड़ा रहता है। ऐसा क्यों ? इसका कारण यह है कि उनके दिलो में प्रेम है और दिल से प्रेम की धारें निकलकर उस प्राणी को घेरती है जिसके प्रभाव से सब उनसे प्रेम करने लगते हैं।

जैसा इंसान का दिल होगा, उससे उसी प्रकार की धारें निकल निकल कर वायु मंडल में फैलेगी। और जो कोई उस वायुमंडल में आएगा उस पर असर करेंगी। छोटे बच्चे विषैले सांपों से खेलते रहते हैं क्या इस पर विश्वास नहीं ? अगर नही है तो अब परीक्षा कर लो। अपने दिल में चिड़ियों से प्रेम करो और देखो कि वह निडर होकर तुम्हारी थाली से अपनी खुराक मांग ले जाएंगे। बिल्लीयों से प्रेम करो वह तुमको खाना खाना मुश्किल कर देंगे और जबरदस्ती अपनी खुराक ले लेंगी।

जानवर तुम पर इसलिए हमला करते हैं कि तुम्हारे दिल में उनके लिए दुश्मनी है। तुम दुश्मनी से बजाएं मोहब्बत करो और वे तुम्हारे चारों और पालतू कुत्ते की तरह फिरेंगे। असलियत तुम्हारे विचारों में है और मन उन विचारों की मिली-जुली धारों का नाम है। शरीर उसका प्रतिबिंब है। क्योंकि तुम्हारी दृष्टि शरीर की तरफ है, वह तुमको दिखाई दे रहा है। दिल की तरफ से तुमने आँखें बंद कर राखी है, इसलिए दिल तुमको दिखाई नहीं देता, शरीर दिखाई देता है, सब कुछ उसी को समझ रहे हो।

एक बच्चा शीशे में अपना अक्स देख कर, उसको दूसरा बच्चा ख्याल करता है, और उससे खेल रहा है क्योंकि उसको अपने शरीर का ज्ञान नहीं है। जब उसको अपने शरीर का ज्ञान हो जाएगा, शीशे को एक तरफ फेंक देगा और अपने शरीर की देखभाल में लग जाएगा। यही हाल तुम्हारा है। तुमको अपने असली शरीर का ज्ञान नहीं है, इसलिए इसकी छाया से खेल रहे हो। जब तुमको अपनी असलियत का ज्ञान हो जाएगा तो

छाया को छोड़ दोगे और असल से खेलने लगोगे। दुनिया में दुख का कारण यही है कि तुम असल को नकल नकल को असल समझ रहे हो। किसी भेदी (भेदी) को साथ लो जिससे असली ज्ञान मिले।

अगर तुम चाहते हो कि तुमको असली आनंद मिले तो किसी वक्त के पूरे संत सतगुरु से संबंध जोड़ो, और उससे 'असल' के जानने के भेद मालूम करो। अहिस्ता अहिस्ता तुम्हारा भ्रम दूर हो जाएगा, असली ज्ञान प्राप्त होगा और हमेशा हमेशा के लिए दुख से निवृत्ति हो जाएगी। यही मनुष्य जीवन का असली ध्येय है। तुम सोचो तुम कौन हो ? तुम्हारी गरज यहां आने की क्या है ? दुनिया में सब काम प्रकृति माँ किसी गरज से कर रही है। क्या तुमको यहां बेगरज से भेजा गया है ? नहीं, कभी नहीं। इसमें बहुत बड़ी गरज छुपी हुई है। सोचो और फिर सोचो। अगर मालिक मेहरबान है तो तुमको जरूर असली ज्ञान प्राप्त होगा और मालिक तो हमेशा से ही मेहरबान है। लेकिन दुर्भाग्य है कि हम उसकी ओर झुकते ही नहीं है।

मुक्ति और निरवाण, दोनों का मतलब करीब-करीब एक ही है। दोनों का मतलब आजादी का है। जिस्म पर निगाह है, इसी को सब कुछ समझ रखा है। अगर यह तंदुरुस्त है तो खुशी है, अगर यह बीमार है तो तकलीफ है और परेशान व दुखी है, लेकिन जिस्म से निगाह ऊँची हुई कि असलियत समझ में आ जाती है। दिल पर निगाह है कि दिल की बीमारी और तंदुरुस्ती अब इतनी परेशान नहीं करती। अब खुशी का दारोमदार (निर्भरता) इंद्रियों की ख्वाहिशात (इच्छाएं) पूरी होती है तो खुशी है, अगर नहीं होती है तो भी कोई खास दुख है।

परमात्मा ने रहम किया असलियत खुली और ख्वाहिशात पर आहिस्ता आहिस्ता काबू पाया। अब तमाम ख्वाहिशात काबू में है और अब खुशी का दारोमदार

(निर्भरता) इन पर नही है। अब ख्वाहिशात परेशान नहीं करती। राजी-व-रजा है। (जो प्रभु की इच्छा है, उसी में प्रसन्न है)। हर हालत में खुश है, कोई परेशानी नहीं, तबीयत में चैन है। एक अजब आनंद हर वक्त मालूम होता है, जिससे तबीयत खुश रहती है। अब मन से निगाह ऊँची हो गई इससे भी छुटकारा पाकर निगाह आनंद पर है। जब तक आनंद आता रहता है, तबीयत खुश है जब आनन्द का आना बंद हो गया, तबीयत भी परेशान परेशान हो जाती है।

और आगे बढ़े, अब बेकैफी (उपरामता) कि हालत है इसमें न आनंद है न गैर आनंद। न किसी से प्यार है, ना दुश्मनी, न किसी के पैदा होने की खुशी, ना किसी के मरने का रंज, न जिस्म से मतलब और न इंद्रियों से ताल्लुक। न ख्वाहिशात है ना आनंद की इच्छा अब किसी चीज से वास्ता नही, हर हालत में एक रस है। दुनिया रहे या जाए, जिन्दगी रहे या मौत आ जाए दुनिया गुलजार रहे आग बरसे, उनकी हालत में कोई फर्क इन बातों में से नहीं आता। अब अपनी आत्मा (असलियत) में आप मग्न है और सदा एकरस। यही मुक्ति और यही निर्वाण है। जहां अनानियत (अहंपना) खुदी मेरा तेरा वगैरह सब की जंजीरे टुकड़े-टुकड़े हो जाती है। जिंदगी अपने आप को आला कानून के साथ कर देती है। इसकी तकमील (पूर्णता) एक जन्म में भी हो सकती है और हजारों जन्मों में भी नहीं हो सकती।

जिनको यह हालत नसीब हो जाती है उन्हीं को संत ओलिया गुरु वगैरा के नामों से पुकारते हैं। गेरुएं कपड़े रामनीमी चादर या कफनी पहनने वाले, तिलक लगाने वाले, धुआंधार व्याख्यान करने वाले संत नहीं होते। भेष बदल लेना आसान है लेकिन मन और इंद्रियों के जीत लेना कोई बिरले ही कर सकता है। किसी शायर ने खूब कहा है:-

"किसी बेकस को ऐ बेदाद गर मारा तो क्या मारा ,
जो खुद ही मर रहा है उसको गर मारा तो क्या मारा
बड़े मूजी को मारा नफ्सेअम्मारा गर मारा।

निहंगों, अजदहाओ शेरों नर मारा तो क्या मारा ,

न मारा आपको जो खाक हो अक्सीर बन जाता,

अगर पारे को ऐ अकसीर गर मारा तो क्या मारा

दिले बदख्वाह में था मारना या चश्मे बदबी में,

फलक पर तीरे आह गर मारा तो क्या मारा

गया शैतान मारा एक सिजदे के न करने में,

अगर लाखो बरस सिजदे में सर मारा तो क्या मारा ।"

मुक्ति और निर्वाण को समझ लो । तर्क वितर्क की जरूरत ना रहेगी । जब तक इस सच्चाई को समझ नहीं आती तभी तक आदमी शब्दों के फेर में अटका रहता है ।

सागर का मोती

- प्रेम में दूरी नहीं होती नगर सच्चा प्रेम है तो प्रियतम और प्रेमी हर वक्त साथ रहना महसूस करते हैं।

स्तुति करने का तरीका

जब सुबह नींद खुले आंखे बंद रखो किसी चीज को मत देखो। ख्याली तौर पर अपने गुरु के चरणों में हाथ रख कर सोचो तुमको दुआ दे रहे हैं। चारपाई से उठो तो प्रभु के गुण गाते हुए उठो और किसी पद को मालिक स्तुति में गाते रहो। शौच आदि से निवृत्त होकर स्नान करो और कपड़े बदलो। उस वक्त बराबर गुण गाते रहो। पाक साफ होकर जब संध्या के लिए बैठो तो ख्याल करो कि किसी महापुरुष के सामने जा रहे, हो आदर से सर झुका कर पग रखो और बैठ जाओ, उनकी तारीफ में कुछ शब्द कहो, फिर उनका आव्हान करो और ख्याल करो कि तुम उनको देख रहे हो और वे तुमको देख रहे हैं। फिर उनका ध्यान करके सब फिकरों से आजाद हो कर बैठ जाओ।

संध्या के वक्त कोई ख्याल दिल में ना आवे। अपना ध्यान उसी तरफ लगाए रहो। जब तुम किसी दुनियावी अफसर के सामने जाते हो तो क्या उस वक्त सिवाय अपनी गरज के और बातों का ख्याल करते हो, या कोई हरकत ऐसी करते हो जो खिलाफ अदब (आदर के विपरीत) हो, और जिससे वह नाराज हो जाए। फिर वह तो अफसरों का अफसर है। अगर उस वक्त दूसरे ख्याल आते हैं तो या तुम उनको हाजिर-नाजिर (उपस्थित) नहीं समझते या उनकी बुजुर्गी के कायल नहीं हो। संध्या खत्म होने पर जो निवेदन करना हो करो, और जो पूछना है पूछो।

पूजा पाठ से निवृत्त होकर जब खाना खाने बैठो तो अपने मन को देख लो कि गुस्सा तो नहीं है किसी की बुराई, तो ख्याल तो परेशान नहीं कर रहा या किसी तरह का और कोई बुरा ख्याल तो दिल में नहीं है ? अगर है तो उस वक्त खाना मत खाओ, अपने मन को शांत हो जाने दो। खाने से पहले ख्याल करो कि तुम्हारा थाली प्रकाश से भरा हुआ है। इससे अच्छे विचार

पैदा होंगे। ख्याल करो कि तुम्हारे गुरुदेव ने इसमें से खाना खा लिया है। जब तुम प्रसाद समझकर खाना शुरू को तो बराबर मालिक का नाम लेते रहो। इससे जो खून बनेगा वह शुद्ध और पवित्र होगा और इससे जो ख्यालात बनेंगे उसमें मालिक का प्रेम शामिल होगा। पेट भर कर खाना मत खा,ओ कुछ खाली रहने दो। जो चीज खाने में अच्छी लगे उसे कम खाओ। अगर खाने में किसी चीज की कमी या ज्यादती हो तो खाने के बाद उसको बतला दो ताकि ठीक कर ली जावे। खाने के बाद मालिक को धन्यवाद दो और खाने पर से उठ बैठो।

जो कपड़ा पहनो पहले ख्याली तौर पर भेंट चढ़ाओ, फिर पहनो। एक महापुरुष का यह नियम था कि खाना आता था उसमें से आधा अपने इष्ट देव के लिए पहले रख देते थे, जो बाद में पंडितों या गरीबों को दे दिया जाता था। पहले हिंदू घरानों में यह आम रिवाज़ था कि पहली दो रोटी अलग रख दी जाती थी। जो कपड़े बनते थे दुहरे बनते थे। इसमें से आधे कपड़े पंडितों या गुरुओं को दे दिए जाते थे चाहे वह कितनी भी कीमत के क्यों ना हो। एक मर्तबा किसी के सुपुत्र (जो किसी उच्च पद पर नौकर थे) एक खुबसुरत अलवान पिता के लिए लाए और उन्हें भेंट किया। अगले रोज़ बगैर अलवान देख कर पूछा कि आपने अलवान क्यों नही पहना तो फरमाया कि यह अलवान हमने ठाकुर जी को दे दिया। उसके लिए जब दूसरा अलवान आया तब उन्होंने उसे पहना।

धन्य हैं वह लोग जो अपने हिस्से में से गरीबों को भी हिस्सा देते हैं और असली ज़कात दान यही है। इनमें बड़ी बरकत है। जिन सज्जनों को परमात्मा ने इस लायक बनाया है उनको चाहिए कि अपने हिस्से में से कपड़ा बनाते वक्त, जाड़े के मौसम में कुछ कपड़ा गरीबों को के लिए तैयार करवा, कर बांट दें।

खाने के बाद जब अपने काम में लगे तो अपने इष्ट का ख्याल कर के काम शुरू करो। और यह ख्याल करो कि वह तुम्हारे हृदय में बैठे हुए सब देख रहे हैं।

बीच-बीच में मौका मिले तो एक-दो मिनट आँखें बंद कर के हृदय में उनके दर्शन करते रहो। जब दफ्तर बंद करो या काम खत्म करो तो मालिक को मन ही मन धन्यवाद दो।

पहले पहल दिक्कत पेश आएगी और भूल हो जाएगी, लेकिन थोड़े दिनों के अभ्यास से आदत पड़ जाएगी। मिलने जुलने वालों और बाल बच्चों सब के साथ मोहब्बत से पेश आओ, उनकी देखभाल रखो, लेकिन अपना मत समझो। उनको ईश्वर की अमानत समझो। रात को बीवी बच्चों को साथ लेकर किस किताब का पाठ करो। महात्माओं की कहानियां सुनाओ, अगर जरूरत हो तो उसका व्याख्या भी करो।

शाम का खाना भी सुबह की तरह खाओ। सोते वक्त मालिक का नाम लो और उसके दर्शन अपने घट में करो और उसी ख्याल में सो जाओ। तुम देखोगे ख्वाब में भी तुम उसी ख्याल में रहोगे जो दृश्य दिखाई देंगे वह भी उसी किस्म के होंगे।

बकायदा साधन करने और इस तरीके के स्तुति करने से खुद-ब-खुद सब बातें ठीक हो जाएंगी और तुम्हारी जिंदगी शानदार बनती जाएगी।

आदमी बुरा है या भला तरक्की कर रहा है या नहीं, इसकी तमीज वह खुद-ब-खुद खूब अच्छी तरह कर सकता है, और खासकर अपने ख्वाबों पर निगाह रखने से। जैसे आदमी के कर्म होते हैं वैसे ही विचार बनते हैं। यह दिमाग के एक हिस्से में बीज के रूप में कायम रहते हैं, नष्ट नहीं होते। मन रात को अपनी इंद्रियों से काम लेना बंद कर देता है। उस वक्त दिमाग जमा किए हुए विचारों की ओर आकृष्ट होता है, और यही सब ख्वाब बन जाते हैं। अगर तुम ख्वाब में किसी पराई स्त्री से बेजा हरकत करते हो, तो अभी काम प्रबल है। अगर किसी पर क्रोध आ रहा है तो क्रोध का जोर है। अगर डरते हो तो मालिक से कोसों दूर हो। अगर इस किस्म के ख्याल तुमको डराएँ और सताए तो सोने से पहले प्रार्थना करके खाट पर लेटो। अहिस्ता अहिस्ता इनसे छुटकारा मिल जाएगा।

संत वचन भाग – १

स्तुति और प्रार्थना सदा अपनी मातृभाषा में ही करनी चाहिए और उसके शब्द में भी वह हो जो दिल से निकले। दूसरी जुबान में गढे हुए शब्दों में प्रार्थना करने से फायदा नहीं होता, जो होना चाहिए। मंत्रों का जाप मूल भाषा में ही होना चाहिए जिसमें वह लिखे गए हो।

गुरुदेव तुम्हारा कल्याण करें।

सागर का मोती

सारी विद्याओं कलाओं आदि यह है कि मनुष्य के मस्तिक में यह बात बैठ जाए कि मैं क्या हूं, मेरी असलियत क्या है, और मुझमें क्या गुण हैं। लोग हर वस्तु की कदर और कीमत जानते हैं लेकिन अपने आप को नहीं पहचानते।

वास्तविक आनंद कहां है ?

आम लोगों का यह ख्याल है कि दुनिया के सामान के अंदर सुख का माद्दा मौजूद है, इसलिए दुनिया के सामान हासिल होने पर इंसान को सुख प्राप्त हो सकता है। इसलिए तमाम दुनिया के लोग दुनिया का सामान इकट्ठा करने की कोशिश में लगे रहते हैं। कोई रुपए पैसे में सुख समझता है। उसको ख्याल है कि रुपया जमा होने पर हमेशा हमेशा की सुख की प्राप्ति और दुख से निवृति हो जाएंगी। इसलिए रुपए पैदा करने और जमा करने की उम्र भर कोशिश करता रहता है। हजारों झूठ बोलता है, सैंकड़ों बेईमानीयां करता है, दुश्मनी-दोस्ती पैदा करता है, खुशामदें करता रहता है। लोगों को गले कटवाता है, तब कहीं जाकर रुपया जमा होता है।

लेकिन उसको सच्चा सुख, जिसके लिए यह सब यत्न किए थे नसीब नहीं होता। अगर रुपये में सुख होता तो तमाम रूपये वाले सुखी होते। नतीजा और तजुर्बा इसके खिलाफ है। व्यादातर रईस (धनी) लोग दुखी नजर आते हैं। रुपए से सुख तो मिल सकते हैं, जो रुपये के आभाव में दुःख रूप बन जाते हैं परन्तु पूर्ण रूप से सुख नहीं होता बल्कि रुपया उनके लिए खुद एक जंजाल बन जाता है।

दूसरा व्यक्ति औलाद से सुख तलाश करता है, शादी करता है, हजारों मिन्नते मांगता है, और जतन पर जतन करता है। औलाद पैदा होती है उसकी परवरिश बड़े लाड़-चाव से करता है। उसकी तंदुरुस्ती कायम रखने के लिए हर एक कुर्बानी करता है ना दिन का ख्याल है, ना रात का, न धूप की चिंता है, ना बरसात की। डॉक्टरों के चक्कर लगाया करता है। गंडे, ताबीजों वालों खुशामदे करता है। कभी गधे के नीचे की मिट्टी की तलाश करता है। कभी मसान पर दूध चढ़ाने जाता है। पाल पोस कर बड़ा हो गया। पढ़ाई की फिक्र है, फिर नौकरी की और फिर शादी।

सारांश यह है कि इसी के पीछे तमाम उम्र नष्ट हो जाती है। समझता यह है की एक बात के पूरा हो जाने पर सुख हासिल हो जाएगा, लेकिन एक बात के खत्म होते ही दूसरी बात शुरू हो जाती है और खुशी का मुंह देखना नसीब नहीं होता। अगर लड़का नालायक निकल गया तो भी रंज और मर गया तो भी उम्र भर के लिए रोना। लो औलाद भी एक जंजाल हो गई।

तीसरा व्यक्ति एक मकान में सुख तलाश करता है। इधर मकान बनकर तैयार हुआ, उधर उसकी मरम्मत की फिक्र पड़ गई। मकान एक मुसीबत का घर साबित हुआ। कोई खूबसूरत औरत में सुख प्राप्त करता है तो कोई विद्या प्राप्त करने में। लेकिन असली सुख मिला दरकिनार, दो चार घंटे के लिए भी सुख नहीं मिलता। थोड़ी देर के लिए परेशानियों से छुटकारा मिल जाता है। उसी को वह सुख का नाम दे देता है ।

हरेक चीज जिसमें वह सुख तलाश करता है उसकी गले की हड्डी या फांसी साबित होती है। उम्र भर उसी में झूमता रहता है और आखिर वही उसकी जान ले लेती है । उस रेशम के कीड़े की तरह, जो अपने अंतर से तार निकलता है, आखिर में वह तार उसको चारों तरफ से घेर लेते है, हवा तक को रोक लेते है और वह दम घुट घुट कर मर जाता है।

इन बातों को देखने से मालूम होता है कि सुख दुनिया की चीजों में मौजूद नहीं वरना धनवान, पुत्रवान, पत्नी खूबसूरत, बढ़िया मकान वाले और विद्वान सुखी होते । अब अगर सुख इन चीजों में नहीं है तो और किन चीजों में है ? नीचे के मिसालों को लेकर यह पता लगने की कोशिश करते हैं कि सुख कहां है ?

एक बच्चा पचासों कंकड़ो से खेल रहा है और वह उन कंकड़ो बड़ी हिफाजत से रखता है। जब सोता है तो कुछ तो अपनी जेब में रख लेता और सोते वक्त उस पर हाथ रख लेता है। लेकिन तब लोग बच्चे की इस हरकत को देख कर हंसते हैं। चार आदमी बैठे ताश

खेल रहे हैं और बड़ा आनंद आ रहा है ना खाने की फिकर है न पीने की। उसको नहीं मालूम है कि चारों तरफ क्या हो रहा है, और कितना वक्त निकल गया। यदि उनसे खेल में कोई बाधक होता है वह तो कहते हैं कि भाई इस समय मत छेड़ो, बड़ा मजा आ रहा है। तभी तार आया कि घर में फलां संबंधी बीमार है। अब उनमें से हर आदमी चाहता है कि ताश बंद कर दे। वही चीजें जो सुख का साधन थी दुख का साधन बन गई।

एक आदमी भूखा है रात को बासी कुसी खाना खाकर सामने रख दिया जाता है और उसमें बड़ा आनंद आता है। लेकिन भूख मिट जाने पर उसी खाने को देखकर उसका जि मिचलाता है।

एक विद्यार्थी गणित के सवाल सोचने में ध्यान मग्न है। उसको बातचीत करना भी बुरा लगता है। घंटों निकल जाते हैं, उसको वक्त के जाने का पता नहीं लगता। बच्चे पास में शोर कर रहे हैं लेकिन उसको कोई आवाज तक सुनाई नहीं देती। दूसरा व्यक्ति जिसका हिसाब कमजोर है गणित के नाम से दूर भागता है। इससे मालूम होता है कि कंकड़ के टुकड़ों, ताश के पत्तों, खाने और गणित के सवालों, किसी में भी आनंद नहीं है। यदि इन चीजों में सुख होता तो हर एक को हर हालत में सुख मिलता।

इससे यहां सिद्ध होता है कि सुख किसी और जगह है। सोचने पर पता चलता है कि जो चीजे हमे मन से प्यारी होती है उसके मिलने पर हमें सुख मिलता है। यानी आनंद हमें उस चीज में मिलता है। जिसमें हमारी जजमदजपवद (तवज्जो) की धारें ज्यादा पड़ती है यानी जितनी वह चीज हमें ज्यादा प्यारी है, उतना ही ज्यादा आनंद हमें उस चीज के प्राप्त होने से होता है। इसका मतलब यह हुआ कि तवज्जो की धार एकत्र हो जाती है तो हमको बहुत बड़ा सुख मिलता है। जैसे यदि कोई व्यक्ति अच्छे खाने का शौकीन है तो उस चीज को, जो

उसे सबसे अच्छी लगती है, खा कर उसे बड़ा आनंद आता है। अगर कोई प्रेमी जन है तो उसको उस प्रियतम को देख कर बड़ी खुशी प्राप्त होती है।

अब सोचो कि जब धारों में इतना आनंद है तो उस केंद्र में जहां से धारें निकलती है कितना आनंद होगा ? उस आनंद का वारापार नहीं है और जिसने खुशकिस्मती से उसकी झलक भी देख ली है वह हर कुर्बानी उसके लिए कर सकता है। हजारों दुनिया की बादशाहत उसके लिए हेच है। उसको देखकर उसका अनुभव करके किसी चीज के देखने व अनुभव करने की इच्छा बाकी नहीं रह सकती। इसका अनुभव स्थूल बुद्धि नहीं कर सकती। केवल उस आदमी को शुद्ध बुद्धि ही इसका अनुभव कर सकती है। जिस पर ईश्वर की कृपा हो और गुरु मेहरबान हो।

ऊपर के बयान को पढ़कर प्रेमी के दिल में यह जानने की इच्छा होती है कि क्या यह बयान सब सच है या दरअसल रचना में कोई ऐसा सतत आनंद का स्थान ऐसा मौजूद है। यदि रचना में ऐसा स्थान है तो कहां है और वहां तक पहुंचने का साधन क्या है ? इन तीनों सवालों का जवाब संक्षेप में वर्णन करने की कोशिश की जाती है।

पहला सवाल यह पैदा होता है कि क्या यह सब बयान सही है और रचना में दरअसल ऐसी कोई मंडल मौजूद है। यदि है तो कहां है ? और हमको दिखाई क्यों नहीं देता ? इसका उत्तर है कि यह तमाम सृष्टि और हमारा शरीर और साइंस के तमाम औजार हमको दे सकता है सूक्ष्म रचना का नहीं। सूक्ष्म रचना का ज्ञान हासिल करने के लिए हमको अपनी स्थूल इंद्रियां शून्य करनी होगी।

सूक्ष्म इन्द्रयाँ इस समय भी हमारे अंदर मौजूद है, लेकिन उनकी तरफ बेपरवाही बरतने और काम न लेने की वजह से बेकार हो गई। उनको अभ्यास की मदद से जागृत किया जाता है। इसके लिए बड़े वक्त व् अभ्यास व सत्संग की जरूरत है। लेकिन सच्चा ज्ञान हमको

उसी वक्त हासिल होगा जब हम अपनी सूक्ष्म इन्द्रियों को जगाकर उस रचना को खुद अपनी आँखों से देख सकेंगे।

फिलहाल हम अपनी उन ऋषि-मुनियों साधु साधु संतों या पूर्वजों की वाणी को देखे जो हर कौम में वक्त-वक्त पर पैदा होते रहे हैं। यह हस्तियां या तो पैदाइशी ऊँचे यानि सूक्ष्म घाटों से उतरकर जीवो के फायदे के लिए मनुष्य चोला धारण करते हैं या तप और अभ्यास करके उस गति को हासिल कर सकते हैं। ऐसा करने से जरूर कुछ ना कुछ विश्वास आ सकता है कि वास्तव में कोई ऐसा मंडल मौजूद है जहां पर पहुंचकर आदमी हमेशा के लिए दुखों से छुटकारा पा जाता है और हमेशा असली आनंद को भोग सकता है।

कृष्ण भगवान कहते हैं- "ना वहां सूरज प्रकाश करता है, न चंद्रमा, न आग, लेकिन फिर भी वहां प्रकाश है। जहां पहुंचने पर इंसान दुनिया में लौटकर नहीं आता, वह मेरा परम धाम है।" उपनिषदों में लिखा है कि वह स्थान जिसका उपदेश सारे वेद करते हैं जिसकि शिक्षा सब तपस्वी देते हैं और जिसकी इच्छा रखकर लोग ब्रह्चर्य रखते हैं वह पद यानि स्थान हम संक्षेप में बतलाते हैं। वह ॐ पद हैं।

हाफिज साहब फरमाते हैं "यह मालूम नहीं है कि मंजिले मकसूद किस जगह पर वाक्य (स्थित) है, लेकिन इस कदर मुझको मालूम होता है कि उस जानिब (ओर) से घंटे की आवाज आती है। कबीर साहब फरमाते हैं "जो कोई भेद से वाकिफ है वही जानता है कि हमारा देश कैसा है हमारे देश में जाति वर्ण संध्या नियम और आचार का झगड़ा नहीं है बिना बादलों के वहां बिजली चमकती है और बिना सूरज के वहां उजियाला है, वगैरह वगैरह। गुरु नानक साहब फरमाते हैं, सचखंड की खोज करो और इंसानी जन्म सफल बनाओ।

इन सब संतो की वाणी से, जिसका जन्म ही मनुष्य की भलाई के लिए हुआ है और जो तमाम उम्र इंसानी जन्म की भलाई के कामों में लगे रहे, विश्वास आ सकता है कि जरूर

इस नजर आने वाली सृष्टि के परे कोई ऐसी सूचना है जिसके भिन्न-भिन्न मंडलों से अलग अलग समय और स्थानों पर महान आत्माएं आई या भिन्न-भिन्न महात्माओं ने अभ्यास करके उन मंडलो तक पहुंच हासिल की, जिसका वर्णन उन्होंने अपनी वाणी में किया है।

उसी राज (तत्व) की और तालीम उन्होंने अपने शिष्यों को दी है कि स्थूल दुनिया के आश्चर्यजनक माया जाल में फंसो, जरूरत के मुआफिक इस दुनिया से काम रखो और अपने निज घर की सुधि लो। और इसके साथ साथ ये संत उस निज घर पहुँचने कि युक्ति कि तालीम भी देते रहे हैं। इन्हीं संतों को अवतार, पैगंबर, औलिया, खुदा का बेटा वगैरह वगैरह नामों से पुकारते हैं। इन बातों को देख कर यकीन जरूर आता है कि अवश्य इस स्थूल रचना से परे कोई और सूक्ष्म रचना मौजूद है ।

इसका विश्वास हो जाने पर दूसरा सवाल पैदा होता है कि यह देश कहां है ? इसका उत्तर यह है कि "पिंडे सो ब्रह्मांडे"। इंसान का इंसानी रूप सच्चे कुल मालिक का अंश है और वही गुण छोटे पैमाने में इस आत्मा में मौजूद है जो बहुत बड़े पैमाने पर मलिकेकुल यानि परमात्मा में है। मालिक का पूर्ण रूप से जिव अनुभव नहीं कर सकता इसलिए इंसानी जिस्म को ध्यान पूर्वक जांचने से ही तमाम रचना का अनुमान हो सकता है। जैसे मालिक ने अपनी शक्ति से कुल रचना रची वैसे ही आत्मा ने अपनी शक्ति से यह शरीर रचा। इंसान के जिस्म का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि यह तीन जिस्मों से मिलकर बना है। स्थूल शारीर, सूक्ष्म शारीर (यानि मन का शारीर) और तीसरा कारण यानि स्हानी शारीर।

इसी प्रकार परमात्मा के भी तीन शारीर हैं। विराट, हरिण्यगर्भ और अव्यक्त। इंसान के स्थूल शारीर में छः चक्र हैं और चूँकि इंसान का स्थूल शरीर मन की जिस्म के नमूने पर बना है लिहाज़ा सूक्ष्म शरीर में भी छः चक्र हैं और सूक्ष्म शरीर के कारण शरीर के नमूने पर बना हैंलिहाज़ा कारण में छः चक्र हैं। इस तरह इंसानी शारीर में १८ चक्र है। छः स्थूल, छः सूक्ष्म और छः कारण। इंसानी

शारीर में में छठे चक्र पर बैठकर (जिसको आज्ञा चक्र भी कहते हैं) । आत्मा तमाम जिस्म को जान देती है।

इसी तरह निर्मल चैतन्य देश में यानि रूहानी देश के छठे स्थान में रूह के भण्डार (यानि सच्चे कुल मालिक) की बैठक है और बाकि देशों में इसकी चेतन धारें या किरणें फैली हुई हैं। जैसे इंसानी छोले में आज्ञा चक्र पर रूह कि बैठक है, बाकि जिस्म पर उसकी चेतन कि धार या किरणें फैली हुई हैं और जैसे इस जिस्म में आत्मा का स्थान ही असली ज्ञान का, जिंदगी और आनंद का स्थान है, इसी तरह सत्यलोक असली बैठक उस परमात्मा की है जो तमाम ज्ञान और आनन्द का भंडार है।

इससे मालूम हुआ कि सच्चा सुख हासिल करने के लिए हर जिज्ञासु को जरूरी है कि अपनी आत्मा को इस पृथ्वी से हटाकर अपनी जिस्म से परे, अपने मन से भी परे हटा कर यानि जिस्म और मन के बारह पर्दों से हटा कर(छः जिस्म के चक्र और छः मन के) इर्म्ल देश के छठे चक्र पर जो कि असली भंडार रूहानियत का है, पहुँचावे तभी सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। इसकी महिमा हर ज़माने में संतों ने गाई है । जो मजहब आत्मा को इस स्थान पर पहुंचा सके वही सच्चा मजहब है और जो अभ्यासी उस रात भंडार पर पहुंच चुका है या वहां से उतरकर आया है वही संत सतगुरु है और जो गुरु आत्मा का रूख उस असली संत के भंडार की ओर फेर दे, और वहां तक पहुंचा दे, वही सच्चा गुरु है।

दूसरे सवाल का भी उत्तर मिल गया कि वह चक्र ।8वां स्थान है। वही असली जिन्दगी का और आनंद का अनंत भंडार है।

उस देश का कैसे पहुंचे

अब तीसरा सवाल रह जाता है कि वहां तक पहुंच कैसे हो ? तो इसका जवाब पहले आ चुका है सिर्फ सच्चा गुरु ही वहां तक पहुंचा सकता है। और कोई जरिया नहीं है। इसलिए सच्चे गुरु की तलाश करनी चाहिए। इसमें कोई शक नहीं कि सच्चे गुरु का मिलना बहुत मुश्किल है, लेकिन दुनिया आलमे इम्कान है (इसमें कोई बात असम्भव नही) जिसको सच्ची लगन लगी है जो खोज रहा है और सच्चा मुतलाशी (खोजी) है उसको जरुर एक दिन सच्चे गुरु मिल जायेंगे।

जिन खोजा तिन पाइयां, गहरे पानी पैठ।
हौं बौरी खोजन चली, रही किनारे बैठ॥

जिनको सौभाग्य और परमात्मा की कृपा से ऐसे गुरु मिल गए हैं उनको चाहिए कि लग-लिपट कर अपना काम बना ले वरना इस दुनिया का क्या भरोसा है यह मुमकिन है कि प्रेमी भक्त और प्रभावशाली व्यक्ति मिल जावें लेकिन ऐसे महापुरुष जिनका आचरण उच्च कोटि का हो मिलना कठिन ही नहीं दूभर है। कोई कोई अवसर का का लाभ उठाकर औरों के चक्कर में फंस कर इस अवसर को हाथ से धो बैठते हैं और फिर उम्र भर पछताते रहते हैं। फिर ना मालूम है ऐसा मौका उनको कब हाथ आए।

सागर का मोती

जिसने दुनियां को एक सराय समझ लिया है, वह सब जगह सराय का तमाशा देख रहा हैं उसे निश्चय हो गया है कि यह सब तो स्वप्न है जो हम देख रहे हैं - यही वेदांत है।

वेद का सार है : ईश्वर की महत्ता का ज्ञान

सृष्टि के किसी काम को अगर ध्यान से देखा जाए तो मालूम होगा कि वह किसी न किसी कानून के अंतर्गत काम कर रही है, चाहे वह काम कितना ही छोटा हो या कितना ही बड़ा हो। कोई काम बेकायदा नहीं है, कोई न कोई सिद्धांत उसके अंदर छिपा हुआ है। कोई जर्रा (अणु) उससे खाली नहीं है। इसको कानूने कुदरत (प्राकृतिक नियम) भी कह सकते हैं। लेकिन ज्यादा उपयुक्त और अच्छा शब्द उसके लिए वेद है। वेद ईश्वर का ज्ञान है जिसके आधार पर तमाम सृष्टि का व्यवहार चल रहा है इसका ना आदि है ना अंत है। इसका विस्तार से वर्णन करना मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन है।

इंसान की अक्ल सीमित है, ईश्वर निस्सीम है, उसका ज्ञान भी निस्सीम है। सीमित बुद्धि असीम का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकती। आज तक किसी ने समुद्र के पानी को नहीं नापा, सिर्फ उसका अंदाजा ही किया। भला फिर उस पारब्रह्म परमात्मा का ज्ञान कोई क्या कर सकता है ? वह अनुमान से भी बाहर है। न आज तक कोई उसका पूर्ण ज्ञान हासिल कर पाया है न कर पाएगा। जहाँ तक मनुष्य की बुद्धि जा सकती है उतना ही ज्ञान हासिल करती है जैसे गंगा का पानी अपनी प्यास के हिसाब से कोई चुल्लू में, कोई गिलास से, कोई लोटे से, कोई घड़े से पीता है। न आज तक गंगा के सारे जल को किसी ने पिया है और न कभी पी सकेगा। इसी का नाम वेद है।

हरेक मनुष्य अपनी अपनी अक्ल के मुताबिक इस को समझता है, लेकिन इसका न आदि है न अंत। अज्ञानी या अपना ज्ञान जताने वाले लोग लिखे हुए श्लोकों को ही वेद समझते हैं। वेद तो यह भी है और उसके अलावा और बहुत कुछ। जो कुछ उस परमात्मा के बारे में आगे

जाना जाएगा वह भी वेद है। जब वेद ईश्वर का ज्ञान है तो ईश्वर को पूरे तरीके से समझ सकेगा । पर क्या कोई पूर्ण रूप से वेदों को समझ पाया या पाएगा ?

आज तक कोई भी ईश्वर को पूर्ण रूप से नहीं समझ पाया , वेदों के अंश को भी पूरे तरीके से नहीं समझ पाया । ऋषियों ने एक-एक दो-दो मंत्रों को समझा, उनकी व्याख्या की और उसमें उनकी तमाम आयु बीत गई। वेदों में सारी विधाओं के बीज और संस्कार पूरी तरह छिपे रहते हैं। यही हाल वेद मंत्रों का है। लोग बातचीत करते समय कह देते कि यह बात प्राकृतिक नियम या वेद के खिलाफ है। ऐसा कहना वेदों और प्राकृतिक नियम के लिए मुंह चिढाना है। ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो दावे से कह सके कि मैं तमाम सृष्टि के कानून को जानता हूँ। वेद ईश्वरीय ज्ञान है और ईश्वर का ज्ञान कभी कलमबद्ध (लेखनी बद्ध) नहीं हो सकता।

ऋषियों ने सांसारिक बंधनों से अलग रहकर एकांत सेवन किया । मन बुद्धि चित्त अहंकार को शुद्ध किया और उनको काबू में किया फिर प्राकृतिक नियमों पर सोच विचारा । धीरे-धीरे उन पर सृष्टि के नियम उन पर खुलते गए। प्रारंभ में उन्होंने उसकी मौखिक शिक्षा अपने शिष्यों को दी। जैसे दो तीन या चार वेदों को जानने समझने याद रखने वालों को वेदी, द्विवेदी , त्रिवेदी या चतुर्वेदी उपनाम दिया गया और फिर जमाने के में साथ-साथ उनको लिखित रूप दिया गया।

लेकिन यह अनुभव का विषय है इसकी शिक्षा हमेशा एक हृदय से दुसरे हृदय में चलती आई है और चलती जाएगी। जिन्होंने ऋषियों की सेवा की उनका सत्संग किया, उन्होंने इसका संस्कार अपने हृदय में ऋषियों से प्राप्त किया। फिर अपने अभ्यास और तपस्या से उनका अनुभव किया, किताबों से मिलान किया, और इस तरह ब्रह्म विद्या को प्राप्त करके मोक्ष की प्राप्ति की जो जीवन का लक्ष्य है। और निर्वाण (यानी जन्म मरण के चक्कर से मुक्त) में

दाखिल हो गये। जिन्होने गलती से इसको सिर्फ किताबी विद्या समझा उन्होंने किताब पढ़कर अपने को वेद का ज्ञाता समझ लिया। वह रास्ते से भटक गए और अभिमानी हो गये। वेद दैवी पुस्तक है। यह मनुष्य की लिखी हुई नहीं है और हर धर्म में ऐसा कहा गया है। आकाश या आसमान शून्य को कहते हैं और मस्तिष्क में शून्य का स्थान है। जो विद्या ऋषियों के दिमाग में उतरी वही आसमान से उतरी हुई है कहीं गई है। वेदों से अभिप्राय उस तमाम ईश्वरीय ज्ञान से है जो अब तक भिन्न भिन्न देशॉन में अवतारों, संतों या पैगंबरों आदि पर उतरा। इसमें कुरानमजीद, बाइबिल जंड अवस्था, धम्म पद आदि सभी पवित्र ग्रंथ शामिल है।

सागर का मोती

अपना और परमात्मा का प्रेम कभी मरता नहीं माल दब जाता है इसी वजह से कहा जाता है कि गुरु कभी मरता नहीं उसका सिर्फ बिछड़ना हो जाता है।

चार प्रकार के मनुष्य

संसार में आमतौर पर चार तरह के मनुष्य नजर आते हैं :-

(१) नर पशु (२)गुरु पशु (३)स्त्री पशु और (४) वेद पशु।

(१) नर पशु – वह है जो बिना जाने और सोचे-विचारे किसी के कहने पर विश्वास करके उसका पीछा करे यानि उसके कहने पर अमल करने लगे। जैसे किसी ने कहा 'कौवा तेरे कान ले गया' तो वह अपने कान को ना देखें और कौवे के पीछे दौड़ पड़े। कोई मनुष्य रोने लगे कि हाय मेरी पत्नी विधवा हो गई। यह तो सोचता नहीं कि मेरे होते हुए घरवाली कैसे विधवा होगी लेकिन किसी के कहने पर विश्वास कर के रो रहा है।

(२) गुरु पशु :- ऐसे बहुत से साधु हैं जो पेट भरने और धोखा देने के ख्याल से बच्चों या बड़ों तक की बीमारी एक ही रोज में ठीक करने का दावा करते हैं या परमात्मा में दर्शन चंद रोज़ के सत्संग में ही कराने का आश्वासन दे देते हैं। कोई सट्टा बतलाकर रुपया पैदा करने की तरकीब बतलाता है। कोई नोटों को दोगुना करता है। गरजे की धोखा देने और पेट भरने के हजारों तरीके ऐसे बनावटी साधुओं ने निकाल रखें हैं और लोग ऐसे हैं कि उन पर विश्वास करके, उनके धोखे में आकर अपनी इज्जत और धन दौलत तक खो बैठते हैं। अगर अनपढ़ लोग इस चक्कर में आ जाए तो आश्चर्य नहीं है, लेकिन आश्चर्य तो यह है कि बड़े बड़े, पढ़े लिखे भी इन बातों पर विश्वास करके बेवकूफ बनते हैं। वे सब चाहती है।

(३) स्त्री पशु :- दुनिया स्वभाव से स्त्री से प्रेम करती है। जो जीव उसके गुलाम हो जाते हैं। वे भी उम्र भर दुनिया के गोरखधंधे में फंसे रहते हैं और कभी दुनिया से बाहर नहीं आ सकते। इसका मतलब यह नहीं कि अपनी स्त्री से प्यार ना करो। नहीं, प्यार अवश्य

करो, लेकिन सोच समझकर। कान से सुनकर नहीं आँख से देखकर और बुद्धि से विचार कर करो। जो जीवन में अपनी स्त्री की बातों को गुरु की बातों पर प्राथमिकता देते हैं वे परमार्थ कि कमाई कभी नहीं कर सकते।

(४) <u>वेद पशु</u> :- वे हैं जो वेदों को पढ़ते तो हैं लेकिन उसका असली मतलब नहीं समझते। शब्दों के झंझट एवं जाल में पड़े रहते हैं और सिर्फ उन्हीं के उधेड़बुन में लगे रहते हैं। उनका अपना असली अनुभव कुछ नहीं होता। जब तक पढ़ कर उस पर अमल नहीं किया जाएगा कोई फायदा नहीं होगा बल्कि नुकसान होगा। बगैर पढ़ा लिखा भी अपने अभ्यास की मदद से अनुभव खुलने पर असली तत्व को समझ जाएगा। पढ़ा लिखा न इधर का रहा ना उधर का। वह समझता है कि वह सब जानता है। इसलिए जानने की कोशिश नही करता और हमेशा अज्ञानी तथा अभिमानी बना रहता है।

असली ज्ञान वह है जो मन और बुद्धि के शुद्ध और एकाग्र होने पर अदर से खुद निकलता है ना की किताब पढ़ने और सुनने से। जिनकी सूरत मनुष्य की सी है लेकिन कर्म पशुओं के से हैं वे मनुष्य नहीं पशु है। असली मनुष्य वह है जिनमे सत्य, धैर्य, शील, शूरवीरता, दया, क्षमा, संतोष आदि गुण हैं। अन्यथा खाना-पीना सो लेना, विषय भोग कर लेना तो जैसे मनुष्य करते हैं वैसे पशु भी करते हैं।

<u>मनुष्य की तीन प्रवृतियां</u>

मनुष्य तीन प्रवृत्ति के होते हैं। पहली प्रकार के ऐसे लोग होते हैं जिनका ध्यान शरीर पर अधिक होता है। खाना पीना सोना और विषय भोग कर लेना इनका मुख्य ध्येय होता है। इन्हें न अच्छे बुरे से कोई मतलब है न यह परमात्मा नाम के किसी चीज को जानते है। इनके सिद्धांत के मुताबिक मनुष्य शारीर मिला है वासनाओं की पूर्ति के लिए (Eat , drink and be

merry) खाओ पियो और मौज उड़ाओ। ईश्वर चर्चा से दूर रहते हैं। अगर सुनते या मानते, उसे ढोंग बताते हैं। कहते हैं कि ईश्वर कोई चीज नहीं, किसने देखा है, इत्यादि।

यह लोग सब से निचली अवस्था के हैं। पशु योनी अथवा शुद्र श्रेणी के गिने जाते हैं। इनके मन का भी विकास (development) नहीं हुआ है। सोचने-विचारने या समझने की कोई प्रभाव इन पर नहीं होता और न हीं ये लोग उसके पात्र हैं। इसलिए ऐसे लोगों के लिए शास्त्रों में कर्म करने का विधान रखा गया है। जैसे शौंच आदि। कर्म करते करते इनके मन का विकास होने लगेगा। उसके बाद इन्हें गुरु की आवश्यकता महसूस होगी।

दूसरी प्रवृत्ति के मनुष्य वे होते हैं जिनके मन का अच्छी तरह विकास (Development) हो चुका है। अच्छाई और बुराई को खूब समझते है। बुरी बात से बचना चाहते हैं अच्छी अपनाना चाहते हैं। वे परमात्मा को मानते हैं और उससे डरते हैं। ऐसे लोगों की संख्या सबसे अधिक है। दुनिया में इसी श्रेणी के मनुष्य सबसे अधिक परेशान हैं और इन्ही को अध्यात्मिक सहायता की ज्यादा जरूरत है ताकि वे आत्मा को बलवान बनाकर उसे मन के बंधन से आज़ाद करा सके। ऐसे लोग कुछ न कुछ पिछली कमाई किये होते हैं सुख शांति के खोजी होते हैं। उनका जी चाहता है कि हम बुराई की बातों से बचें, अच्छे अच्छे काम करें, परमात्मा की प्राप्ति हमें हो जाए। जिससे हम हमेशा हमेशा की शांति पा जाए लेकिन पिछले संस्कारों के वश वे ऐसे काम कर डालते हैं जिन्हें वे करना नहीं चाहते। ऐसा इसलिए होता है कि जब मन जन्म जन्म से उसका आदि है और आत्मा इतनी कमजोर हो गई है कि मन उस पर हावी हो जाता है।

चाहते हैं अच्छा कर्म करना, हो जाता है बुरा। यह द्वंद की अवस्था है और ऐसे लोगों को गुरु की आवश्यकता है। मनुष्य योनि बीच की योनी है। पशु से ऊंची और

देवताओं से नीची। इसलिए इसमें भले बुरे का ज्ञान होता है। मन का स्थान है। मन तीन प्रकार का होता है – Upper Mind (सात्त्विक मन) Middle Mind (राजसी मन)Lower Mind (तामसी मन)

सात्त्विक मन :- जो अच्छाई कि तरफ ख्याल रखे, बुराई का जहाँ नाम भी न हो – देवताओं कि सी खसलत (स्वभाव) तामसी मन (Lower Mind) को जो हमेशा बुराई में ही बरते। क्या अच्छा है क्या बुरा यह ख्याल भी ना हो- जानकारी की सी खसलत(स्वभाव) बनी रहे।

ऐसे लोगों के लिए कर्म बंधन नहीं है। ये प्रेम के भूखे हैं ये मन कि घात पर अटके हुए है जो बिच का घात है कभी उपर को खिंच जाते हैं कभी नीचे को। ऐसे ही लोग परमार्थ के सच्चे खोजी होते हैं और अगर वक्त से पूरे सदगुरू इन्हें मिल जाए और पूर्ण सम्र्पन हो तो कल्याण हो जाता है।

तीसरी प्रवृत्ति के लोग होते हैं जिन्होने पिछले जन्म में ही सब कुछ कमाई कर ली है पर ऐसा संस्कार या ख्वाहिश मरते वक्त बाकी रह गई थी जिसको पूरा करने या भोगने के लिए जन्म लेना पड़ा। इसके अंदर बुराई का अंश नहीं होता। ये खुद हमेशा अच्छाई ही अच्छाईमें बरतते है और दूसरों को वैसा करने को कहते है इनकी खसलत (स्वभाव) देवताओं कि सी होती है, इन्हें करना धरना कुछ नहीं पड़ता जिस संस्कार के वश आये थे उसे भोग कर वापिस अपने धाम को चले जाते हैं इन्हें ज्यादा मदद कि जरूरत नहीं होती। केवल नाम मात्र के लिए गुरु धारण करते हैं।

जिस तरह तीन प्रवृत्ति के मनुष्य होते हैं उसी तरह गुरु की भी तीन श्रेणियों हैं – (१) गुरु (२) सतगुरु और (३) परमगुरु। यानि जिस्मानी, ख्याली, रूहानी।

जो लोग निचली अवस्था के हैं, जिनका बाहरी रूप पर (यानि माद्दा पर) ध्यान ज्यादा है Mind का Development (मन का विकास) करता है अभी पूरी तरह नहीं हो पाया, गुरु का शरीर ही उनका गुरु है। मतलब यह कि वे गुरु के स्थूल शरीर का ही ध्यान करते हैं। जो लो इससे ऊँची अवस्था प्राप्त कर चुके है, मन पूरी तरह विकसित हो चूका है गुरु का ख्याल ही उनका गुरु है दुसरे शब्दों में ये समझ लीजिये कि ध्यान करते वक्त गुरु का शरीर उनके ध्यान में नही आता बल्कि गुरु का ख्याल ही उनके सामने आता है। जिनके अंदर शब्द जारी हो जाता है और प्रकाश दिखाई देने लगता है, यही सद्गुरु है।

परमगुरु परमात्मा को कहते हैं जो सबका गुरु है। देहधारी गुरु का सहारा लेकर सद्गुरु यानि शब्द और प्रकाश तक पहुंचाते है। शब्द और प्रकाश का सहारा लेकर साधक में प्रेम पैदा हो जाता है। उसके बाद परम गुरु यानि परमात्मा के देश में पहुंच जाते हैं। यानी ॐ का ख्याल आने लगता है। और चारों गतियां (सालोल्य, सामीप्य, सारुप्य, और सायुज्य) से गुजर कर उससे मिलकर एक हो जाता है।

पारस लोह कंचन करत, गुरु करैं आप समान।

सागर का मोती

सच बोलना और हलाल की कमाई पर गुजारा करना बहुत बड़ी तपस्या है और अगर इसी को कोई अंत तक निभा सके तो वह अपने आप ही भवसागर से पार हो जाएगा।

कुछ महत्वपूर्ण बातें

कुछ लोगों का प्रश्न होता है कि कोई मनुष्य है तो सत्संगी किंतु पूरे अंगों में फंसा रहता है और दूसरा मनुष्य सत्संगी नहीं है परंतु अच्छा आचरण रखता है। दोनों में अच्छा कौन है ?

इसका उत्तर यह है कि वर्तमान अवस्था के अनुसार जो गैर सत्संगी है वही अच्छा है, किन्तु जाहिरी हालत पर भी सोच समझकर गौर करना चाहिए। हो सकता है कि सत्संगी के अंदर से पिछले जन्मों के विकार दूर किए जा रहे हो। हो सकता है कि वह संस्कार वश ऐसा करता हो और संभल कर चलने का यत्न करता हो। ऐसा इंसान तरक्की की तरफ जा रहा है। उसकी यह जाहिरा हालत अस्थाई है।

पूरे गुरु की शरण मिल जाना कोई मामूली बात नहीं है और उससे प्रेम का रिश्ता जुड़ जाना और भी दुर्लभ है। जिनके संस्कार अत्यंत उत्तम होते हैं उन्हें ही पूर्ण सतगुरु के दर्शन प्राप्त होते हैं। यह उनका महासौभाग्य है। इसलिए अगर किसी सत्संगी में अवगुण है और सिर्फ एक गुण अपने गुरु से सच्चा प्रेम है तो वह उस गैर से, जो चाहे कितना चरित्रवान और गुणवान है, हजार गुना बढ़कर है। अकेला गुरु का प्रेम ही उसे सब आपदाओं से निकाल कर ले जाएगा। उसके प्रेम की आग ही कंचन को शुद्ध कर देगी। सारा मैल यानी बुरी बातें एवं संस्कार जलकर भस्म हो जाएगा। अगर उसमें जाहिरी कोई कसर नजर आती है जो पिछले संस्कारों की वजह से है तो आहिस्ता आहिस्ता संस्कार पूरे हो जाने पर शांत हो जाएगा। कबीर साहब कहते हैं –

कबीर मेरे साथ की निंदा करे न कोय।

आपै चंद कलंक है तऊ उजियारा होय।

ऐसे मनुष्य की निंदा नहीं करनी चाहिए क्योंकि वह सच्चा साध है। गुरु की शरण में रहकर वह अपनी कमजोरियों को दूर कर रहा है। चंद्रमा को हजार दोषी ठहराओ लेकिन संसार को शीतलता और प्रकाश प्रदान करता है। इसी प्रकार साधुजन (सच्चे साधक) अपनी कमजोरियों के होते हुए भी दूसरों की हितकारी होते हैं।

इसके विपरीत जो मनुष्य सत्संगी नहीं है परंतु अच्छे कर्मों में भाव रखते हैं तथा कार्य करते हैं, आगे चलकर जब बुरे संस्कार उभरेंगे अपनी हालत को कायम न रख सकेंगे। गुरु धारण नहीं किया है तो जब संस्कारों का वेग आएगा उसमें बहने लगेंगे और राह से बेराह हो जाएंगे चुकी बेसहारे हैं। उनमें अभिमान पैदा होने का डर रहता है और जब तक सत्संग न करे उन्हें आगे का रास्ता दिखाई नहीं देता।

कुछ लोग सत्संग में आकर ऐसे उटपटांगसवाल कर बैठते हैंजिनमे न उनका भला होता है किसी और का। जैसे यह पूछना कि परमात्मा को किसने पैदा किया, मृत्यु कब होगी इत्यादि। ऐसे प्रश्न अनुचित है। महापुरुषों का वचन है कि जब संसारी का काम करें तो यह सोच कर कि हमको कभी मरना नहीं है। और परमार्थ का काम यह सोचकर करना चाहिए कि मौत न जाने कब आ जाए। इसलिए मौत के लिए हर वक्त तैयार रहें और जो अवसर मिले उसे मालिक कि बन्दगी में लगावें। यद्यपि संत अंतर्यामी होते हैं सब कुछ जानते हैं तो भी चूँकि मालिक कि तरफ से यह इंतजाम है कि मौत के दिन का पता मनुष्य को नहीं होने पावें। इसलिए वे परमात्मा की इच्छा तथा उनके रहस्य को खोल कर बता देना अनुचित तथा जीव के लिए अहितकर समझते हैं इसलिए ऐसे व्यर्थ प्रश्न नहीं करने चाहिए।

गुरु की आवश्यकता क्यों है

कुछ लोगों का ख्याल है कि ईश्वर तो सबका है वह सत्यम शिवम और सुंदरम है, उसे पाने का हर एक को समान अधिकार है, फिर गुरु की क्या आवश्यकता है।

इसका उत्तर यही है कि यदि किसी जीव को गुरु के बिना ईश्वर प्राप्ति हो जाए और पता लग जाए कि सभी मनुष्य गुरु धारण किए बिना ईश्वर प्राप्ति समान रूप से कर सकते हैं तो उसका ख्याल सही है। परंतु जिसे ईश्वर प्राप्ति नहीं हुई है और खोजी है तो वह ख्याल उसके लिए नुकसान पहुंचाने वाला है। ऐसे लोग केवल बातें ही करते हैं, ईश्वर प्राप्ति का अनुभव नहीं व्यक्त कर सकते क्योंकि ईश्वर प्राप्त करना इन बातों से कोसो दूर है।

सच तो यह है कि अवतारी पुरुष को छोड़कर हरेक को गुरु की आवश्यकता है। यद्यपि उन्हें जरूरत न ठी लेकिन आदर्श कायम करने के लिए सभी अवतारी पुरुषों ने गुरु किया है। कृष्ण भगवान, रामचन्द्र जि महाराज, आदि सब ने गुरु धारण किया। क्या तुम उन से भी आगे बढ़ गये ? जब तक पढ़ाई लिखाई मामूली गुरु की मदद के बिना नहीं प्राप्त होती तो ब्रह्म विद्या की प्राप्ति कैसे हो सकेगी ? साधारण मनुष्यों के मन का बहाव दुनिया की तरफ होता है। ईश्वर प्राप्ति के लिए अंतर कि चढ़ाई करनी होती है और मन को अन्तर्मुखी बनाना पड़ता है।

अगर किसी मनुष्य को अपने ऊपर बड़ा काबू है तो ज्यादा से ज्यादा वह अपने मन को शांत बना सकता है। हालांकि यह काम बड़ा मुश्किल है और इसके करने में भी कई जन्म बीत सकते हैं ; लेकिन अगर ऐसा भी हो जाए तो मन के शांत हो जाने पर इंसान को नींद या गफलत आ जाती है। और मन फिर बेकाबू हो कर बहिर्मुखी हो जाता है। इसलिए उस को

अंतर्मुखी बनाने के लिए गुरु की जरूरत है। वे अपनी मदद से उसके मन को आहिस्ता आहिस्ता अंतर्मुखी बनाते जाएंगे और जैसे वैद्य रोगी को दवा और पथ्य दे कर अच्छा कर देता है।

यह सच है कि ईश्वर सबका है और उसे प्राप्त करने का सबको समान अधिकार है लेकिन कोरे ख्याल से ही तो कुछ नहीं होता। सूर्य सब को प्रकाश देता है लेकिन जिसकी आंखें बंद है या अंधे आदमी, चमगादड़, उल्लू आदि उसके प्रकाश से कुछ लाभ नहीं उठा सकते। इसी तरह साधारण मनुष्य आंतरिक चक्षु खोले बिना ईश्वर का प्रकाश नहीं देख सकते। यह सब गुरु की सहायता के बिना कदापि नहीं हो सकता।

मनुष्य कि एक विशेषता यह है कि ईश्वर कि ओर से उसको इच्छा शक्ति और शुद्ध बुद्धि दी गई है जिसमे वह दुनिया का तजुर्बा कर सके और तजुर्बा करने के बाद द जब उसकी असलियत को समझ जाए तो इच्छा शक्ति के द्वाराउससे अलहदा हो सके। लेकिन मनुष्य शुरू से निचली अवस्थाओं के आकर्षण में फंस जाता है और दुनियां के चीजों को हासिल करने में लग जाता है। जिससे उसकी बुद्धि परमात्मा की ओर से हटकर दुनिया में फंस जाता है और उसके प्राप्त करने की कोशिश करती रहती है।

बुराइयों को जानते हुए भी और उनसे अपने को छुड़ाने की कोशिश करने पर भी मनुष्य सफल नहीं होता। ऐसी हालत में मन जो सबसे बड़ा बैरी है उसको शांत करके आत्मा को उससे निकालना मुश्किल ही नहीं असंभव है। जरूरत इस बात की है कि हम अपनी बुद्धि को शुद्ध करें, मन की खोई शक्ति को एकाग्र करें जिससे बुराइयों से अपने आप को निकाल सकें। जब हम किसी महापुरुष का सत्संग करें, उससे प्रेम का नाता जोड़े और उसका स्मरण करते रहें।

ऐसे ही महापुरुष को, जिसके साथ हमारा इस प्रकार का व्यवहार हो, गुरु कहते हैं। इसलिए बिना उसकी सहायता के मन पर, जो दुनिया में हमारा सबसे बड़ा बैरी है, बाधक है, विजय नहीं पा सकते और अपना लक्ष्य जो शांति और आनंद की जिंदगी है, प्राप्त नहीं कर सकते।

पांच आवश्यक बातें

सत्संग में आकर नीचे लिखी पांच बातों पर हर प्रेमी भाई बहन को अवश्य समझ लेनी चाहिए :-

पहली यह कि दुनिया की सब चीजें और अपना शरीर नश्वर हैं। केवल एक आत्मा ही ऐसी चीज है ऐसी चीज है जिसका नाम नहीं होता। अगर हमारे शरीर में वे सब चीजें हटा दी जाए जो नश्वर हैं तो अंत में जो बचेगा वही एक रस कायम रहने वाला है उसी को आत्मा कहते हैं। वही हमारी जान और सूरत है।

दूसरी यह कि आत्मा का भी एक असल भंडार है जहां से यह आई है और वह कुल जिसका यह अंश है, सच्चा मालिक (अंशी) है उसे लोग परमेश्वर, सच्चिदानंद, अल्लाह और अगणित नामों से पुकारते हैं।

तीसरी यह की आत्मा का गुण पानी की बूंद की तरह है। जिस तरह हर कतरा यानी पानी की बूंद कुदरती तौर पर अपने असल भंडार समुद्र को वापस जाना चाहती है, वैसे ही आत्मा का स्वाभाविक प्रेम एवं लगाव अपने असल भंडार यानी सच्चे मालिक की तरफ है।

चौथे यह कि जैसे आत्मा को चाह अपने असल भंडार में समा जाने की होती है, वैसे ही उस सच्चे मालिक को भी यह ख्याल होता है कि समस्त आत्माएं उसकी गोद में आ जाए ।

पांचवी यह कि उस सच्चे मालिक परमेश्वर की ओर से यह प्रबंध है कि समय-समय पर उसमें से रूहानी धारें प्रकट होकर पृथ्वी लोक पर उतरती है संत सद्गुरु रूप धारण करके जीवो को निज भंडार में समा जाने की राह बतलाती है और जो आत्माएँ एक इच्छुक होती है उन्हें अपने प्रीतम के मिलने में पूरी पूरी सहायता करती है। कुछ को साथ ले जाती है और बाकियों के लिए बीज छोड़ जाती है ताकि वे भी उसी राह पर चलकर अपने लक्ष्य को पूरा करें। इन्हीं को अवतार सतगुरु औलिया इत्यादि नामो से पुकारते हैं। अगर किसी को भाग्य से ऐसे चाहिए सद्गुरु सद्गुरु मिल जाएँ तो उसे चाहिए कि उनकी शरण लेकर अपना काम बना ले।

कुछ स्त्रियाँ सत्संग में शामिल होने के बाद प्रार्थना करती है कि उनके पति भी सत्संग में शामिल हो जाए। उनकी यह प्रार्थना अनुचित नहीं है । परंतु उनके लिए यह अच्छा है कि अपने पति के साथ ऐसा व्यवहार करें । जिससे उसे विश्वास हो जाए कि सतगुरु की शरण में आने से उसका मन निर्मल हो रहा है। जब उसको इस तरह का विश्वास हो जाएगा तो अवश्य उसको संत मत कि शिक्षा जानने की उत्सुकता पैदा होगी और यह इच्छा पूर्ण करने के लिए संतमत के आचार्यों पर उसका विश्वास पक्का हो जाएगा। इस पर अमल करने से स्त्रियों की इच्छा (सत्संग में अपने पतियों को शामिल करने की अभिलाषा) पूरी होगी तथा उनके घर में सुख शांति बढ़ती जाएगी और दोनों के स्वभाव में सुखदायक परिवर्तन होता जाएगा।

किसी संबंधी को जबरदस्ती सत्संगी बनाने की चाह उठाना ठीक नहीं है। परमार्थ के विषय में हरेक को अपनी अपनी स्वतंत्रता है। इंग्लैंड तथा अन्य ईसाई पश्चिमी देशों

संत वचन भाग – १

में अगर पति कैथोलिक हैं तो पत्नी प्रोटेस्टेंट हैं। इसके अलावा सभी जीव परमात्मा की संतान हैं और सब का भला चाहता है। उसको हमारे मुकाबले में अपनी संतान की ज्यादा चिंता है। हम केवल मोह वश उनकी उन्नति चाहते हैं और मालिक स्वभाव वश उनकी उन्नति की चिंता रखता है।

सागर का मोती

- *मैं यह जरूर चाहता हूं कि ब्याही हुई लड़कियां अपने पति की आज्ञा में और कुंवारी लड़कियां अपने पिता, भाई, या किसी सरपरस्त (Guardian) के कहने में रहे। आज़ाद लड़कियां परमार्थ नहीं कमा सकती और उनको मुझसे मिलने से कोई फायदा भी नहीं हो पाएगा।*

सत्संग के वचन

(१) परमात्मा एक हैं। वही सब का आधार हैं। उसका कोई आधार नहीं हैं।

(२) हर चीज के दो शक्लें हैं - असल और नकल यानि जात और सिफात। परमात्मा के भी दो रूप हैं - साकार और निराकार। साकार का मतलब हैं "जात सिफात के साथ" यह कर्ताधर्ता तमाम दुनिया का हैं और भक्तों का इष्ट हैं। दूसरा निराकार "जात वगैर सिफात" के हैं यानी निर्गुण हैं। यह ज्ञानियों का इष्ट हैं।

(३) सिफात को ही प्रकृति कहते हैं। यह असल के साथ रहती हैं लेकिन जब असल से अलग होकर जाहिर होती हैं तो प्रकृति या सिफात कहलाती हैं। जैसे किसी चीज का साया जब असल से अलहदा हो जाता हैं तो साया कहलाता हैं। साया नकल या सिफात में अपना आधार नहीं होता । उसका कयाम (अस्तित्व) स्वामी के आधार पर हैं। स्वामी से शक्ति पा कर यह तमाम रचना को रचती हैं। तमाम दुनिया पर अपना पर्दा डाले रखती हैं और असल से अलहदा रहती हैं। कोई कोई विरला ही उसके असर से बच सकता हैं वरना यह सब को भरमाती हैं। मुसलमान सूफियों ने उसे शैतान का नाम दिया हैं। हिंदू उसे प्रकृति या माया के नाम से पुकारते हैं।

(४) जब यह प्रकृति अपने असल से अलहदा होकर उसकी शक्ति लेकर दुनिया को पैदा करती हैं पालन पोषण करती और संहार करती हैं तो उसी को संसार कहते हैं। जब यह अपनी असल में समा जाती हैं तो यह संसार भी जाता रहता हैं। इसी को प्रलय और कयामत-कुब्रा भी कहते हैं। इसी कारण से हिंदुओं ने इसे तीन शक्तियों ने तक्सीम (विभाजित कर लिया) हैं :-

(।) पैदा करने वाली शक्ति 'ब्रह्मा' यानी रजोगुण

(II) पालन पोषण करने वाली शक्ति यानि 'विष्णु' और

(III) संहार करने वाली शक्ति 'शिव' यानी तम

(५) इन्हीं शक्तियों से बेशुमार शक्तियां पैदा हो गई हैं जिनसे कि दुनिया का कारोबार चलता रहता है। इनको हिंदू लोग देवता और मुसलमान लोग फरिश्ता कहते हैं।

(६) जो जात या असल को पूजते हैं वही ज्ञानी, खुदा परस्त, दीनदार और सच्चे साधक माने जाते हैं।

(७) जो सिफात (प्रकृति) को पूजते हैं और उसी को असल मानते हैं वह काफ़िर (नास्तिक) बेदीन (धर्महीन) या बुत परस्त (मूर्ति पूजक) कहलाते हैं। जो किसी वचन को लेकर उसी को असल समझ कर पूजता है। वह बुत परस्त नहीं है लेकिन मंजिल से अभी दूर है।

(८) जो असल को सिफात के लिहाज़ से पूजता है यह धोखे में है। वो दरअसल (वास्तव में) काफिर और बेदीन यानी मंजिल से भटका हुआ है।

(९) सिफात यानि देवताओं को पूजने वालों को दुनियांवी सामान मिलते हैं। असल को पूजने वालों की जात से कुर्बत (नजदीकी) होती है यानी मोक्ष निजात यानि आजादी मिलती है।

(१०) दुनियां में असल को पूजने वाले कोई कोई ही हैं वरना सब बुत परस्त (मूर्तिपूजक) हैं, यद्यपि उनकी शक्लें जुदा-जुदा हैं।

(११) हर मजहब का लक्ष्य एक ही है यानी सिफात (प्रकृति) से हटाकर असल की ओर ले जाना।

(१२) परमात्मा की शक्ति या सिफात को 'प्रकृति' कहते हैं और जीव की सिफात को या मेरे तेरे पने को माया कहते हैं।

माया देश :- यहां स्थूल प्रकृति का राज है यानी खुदगर्जी, स्वार्थ, मेरा तेरा पना ज्यादा है और इसी वजह से यह दुख और क्लेश का मुकाम है। इसका ठहराव भी कम वक्त के लिए है। इसका आधार काल देश है। कुछ वक्त के बाद यह अपने आधार में लय हो जाता है जिसको कयामत या प्रलय कहते हैं। मामूली भाषा में से संसार कहते हैं।

काल देश :- इसके दो हिस्से हैं। एक निचला हिस्सा माया देश से मिला हुआ है। उसमे भी स्थूल माया का राज है लेकिन कमी के साथ। यहां भी सुख दुःख मौजूद है लेकिन कुछ कमी के साथइसका ठहराव माया देश से कुछ ज्यादा है। इसी को देव लोक कहते हैं। इसका आधार दयाल देश है। जब यह अपने असल यानि दयाल देश में लय हो जाता है तो उसको कयामते कुब्रा या महाप्रलय कहते हैं। दूसरा हिस्सा जो दयाल देश से मिलता हुआ है यहां पर सूक्ष्म माया है यहाँ पर सुख दुख और भी कम है लेकिन मौजूद जरूर है।

दयाल देश :- यहां पर माया या प्रकृति का कोई दखल (हस्तक्षेप) नहीं है यह सब का आधार है इसका कोई आधार नहीं है। यहाँ आत्मा का निवास है। यह हमेशा हमेशा कायम रहता है। इसका कभी नाश नहीं होता। इस देश में प्रवेश पाने का नाम ही मोक्ष है मुक्ति है। इसी को पारब्रह्म कहते हैं। यह शक्ति का भंडार है। कुछ धर्मों ने यह माना है कि यह भी किसी आधार पर है और समय पर यह भी उसमे लय हो जाता है। ऐसा जान पड़ता है कि इसको दो अंगो में बांट दिया है।

(१३) **ब्रह्मांडे सो पिंडे** :- ब्रह्मांड का नक्शा और शक्तियां पिंड (मनुष्य शरीर) में मौजूद हैं। जो तक्सीम (विभाजन) ब्रह्मांड की है वही तक्सीम पिंड में भी है। फर्क सिर्फ मिकदार (मात्रा) के लिहाज से है, न कि गुण के लिहाज से। ब्रम्हांड और पारब्रह्म की शक्तियों

और विभाजन को पूर्ण रूप से नहीं जाना जा सकता है। पिंड की शक्तियां और तकसीम का अनुमान किया जा सकता है। जिस तरह सृष्टि में तीन भाग हैं :- उसी तरह देश दयाल देश और फिर हर एक के छः छः उपभाग हैं, माया इस पिंड शरीर के तीन भाग और अठारह उपभाग हैं और आत्मा का स्थान सबसे ऊंचा है।

(१४) जिस तरह आदि शक्ति अपने स्थान पर रहती हुई तमाम सृष्टि की देखभाल पालन-पोषण करती है। उसी तरह आत्मा अपने स्थान पर बैठी हुई तमाम जिस्म की देखबाल करती है ।

(१५) इसी शक्ति और आत्मा में अंश और अंशी का भेद है। जिस तरह समुद्र और उसकी एक बूंद में सूर्य और उसकी एक किरण में - या एक पहाड़ और रेत के जर्रे (कण) में। जिस तरह पानी की एक बूंद की, चाहे वह किसी स्थान में हो, यह ख्वाहिश रहती है कि अपने आप को समुद्र में पहुंचा दें, इसी तरह हर एक आत्मा की यह ख्वाहिश होती है कि अपने आपको अपने निज घर में पहुंचा दें।

(१६) चाहे वह किसी दशा में हो, जीवात्मा जब तक अपने निज धाम में नहीं पहुंच जाएगी अस्थाई सुख चैन और शांति नहीं मिलेगी। इसलिए हर एक मनुष्य का यह असली कर्तव्य है कि जिस तरह हो अपने घर की सुधि लें और वहां पर पहुंच जाए ताकि हमेशा की शांति और सुख प्राप्त हो।

(१७) इसका तरीका सिर्फ यह है कि अपनी सूरत की धार को दुनियांवी विषयों (इंद्रियों, मन बुद्धि, चित्त, अहंकार) से हटाकर अपने निज घर में यानी आत्मा में लगाए। इसका तरीका किसी भेदी (जानकार, गुरु) से दरयाफ्त करके अभ्यास करें। जब तक वाकिफ कार नहीं मिलेगा, घर का पता और घर पहुंचने का तरीका नहीं मालूम हो सकेगा। और जब तक तरीका मालूम करके उस पर चलने का अभ्यास नहीं करेगा उस घर का तरीका

मालूम करके उसका अभ्यास नहीं करेगा, उस घर तक रसोई नहीं हासिल नहीं कर सकता। विद्या पढ़ लेने और वाद-विवाद करने से मंजिल तय नहीं होती और बगैर चले रास्ता तय नहीं हो सकता। यह रास्ता घट में होकर है इसलिए सबसे पहले भेदी को तलाश करना चाहिए। इसके अलावा और कोई तरीका नहीं है।

(१८) दुःख की जड़ ख्वाहिशात (इच्छाओं) में है। जिसको जितनी ज्यादा ख्वाहिशात है उतना ही ज्यादा वह दुखी है। अगर तुम खुश रहना चाहते हो तो अपनी ख्वाइशात को कम करो और तुम देखोगे कि तुम कितने खुश रहते हो।

(१९) लिहाज़ा सिर्फ उन्हीं चीजों से ताल्लुक रखो जिनके बगैर तुम जीवित नहीं रह सकते। मन और स्त्री का रूप एक समान है। मन हमेशा चंचल रहता है। स्त्री भी हमेशा चंचल रहती है। मन हमेशा दुनिया के भोगों कि चाह करता है। स्त्री भी हमेशा दुनिया के भोगों कि चाह करती है। जो मन के अधीन है और उसके कहने में चलते हैं, हमेशा दुखी रहते हैं। इसी तरह जो स्त्री के कहने में ही चलते हैं वे भी हमेशा दुखी रहते हैं।

(२०) दुनिया में हर व्यक्ति अपने आप को (अपने मन को) अच्छा समझता है और दूसरों को बुरा। इसी तरह दुनिया में हर व्यक्ति अपनी स्त्री को अच्छा समझता है और अन्य स्त्रियों को झूठा और उनमें दोष निकालता है। इसी वास्ते वह दुखी है। मन सीधा हो जाने पर बड़े काम का है और परमार्थ में बड़ी सहायता देता है। इसी तरह स्त्री अवगुणों से साफ होकर बड़ी अच्छी साथी साबित होती है और सही मायनों में अर्धांगिनी साबित होती है। इसलिए कोशिश करके अपनी स्त्री को परमार्थ में अपना हम ख्याल (समान विचारों वाली) बनाना चाहिए।

(२१) दुनिया में सब मन मत है। वह गुरु इसलिए करते हैं कि कोई उनका ख्यालात की, चाहे वे अच्छे हो या बुरे ताईद (पुष्टि) कर दे ताकि वे उनको सच्चे मानकर उन चीजों में बेधड़क

बरते । अगर उनके ख्यालात के खिलाफ राय दी जाती हैं तो नाता तोड़ लेते हैं और अविश्वासी हो जाते हैं। यही वजह हैं कि संसार में हजारों में से पांच-दस ही खुश हैं और वह भी वे हैं जो गुरुमत हैं।

(२२) लालची गुरु, इस ख्याल से कि लोग उनको छोड़ न दे अपने शिष्यों कि राय के मुताबिक उपदेश देते हैं ताकि उनकी गुरुवई कायम रहे और इस तरह से अपने शिष्यों के मन को और मोटा बनाते हैं और दुनियां में फसायें रखते हैं।

(२३) सच्चे गुरु जो बेगरज होते हैं और कोई आशा अपने शिष्यों से नहीं रखते (सिवाय इसके कि उनकी परमार्थिक उन्नति हो) अपने शिष्यों के दोष उनको बतलाते रहते हैं ताकि उनका मन साफ और शुद्ध हो जाए और परमार्थ के काबिल बने।

(२४) दुनियां में शहद की मक्खी की तरह रहो। वह फूलों की रस लेती हैं मगर उनको न बिगाड़ती हैं और ना बदसूरत करती हैं।

(२५) गाफिलों से होशियार और होशियारों में बेदार (जागृत) रहकर दाना (बुद्धिमान) आदमी तरक्की कर जाता हैं और जाहिलो (मूर्खों) को पीछे छोड़ जाता हैं।

(२६) दिल की तरबीयत (सुधार) करो। उसको बहकने ना दो। उसका रोकना मुश्किल जरूर हैं क्योंकि वह जिधर चाहता हैं, चला जाता हैं। उसको काबू में कर लो तो सदा सुखी रहोगे।

(२७) जिस तरह छप्पर पर पानी की बूंदे पड़ती हैं उसी तरह चंचल मन में काम क्रोध वगैरह आते हैं।

(२८) दुश्मन के साथ दुश्मन की बदसलूकी (अपव्यवहार) बुरी हैं । क्रोधी का क्रोध क्रोधी पर भी अच्छा नहीं हैं। लेकिन यह हर आदमी को खूब समझ लेना चाहिए कि जिसका मन बुराई की तरफ झुका हुआ हैं, वह उन सब में भी बहुत बुरा हैं।

(२९) दूसरों की कमी बेसी और काम के अधूरेपन को ना देखो। ज्ञानवान सिर्फ यह देखता है कि मेरा अपना काम मुकम्मल है या अधुरा। कहीं मैंने उसको बिल्कुल अपूर्ण तो नहीं छोड़ दिया है ?

(३०) जो आदमी मीठे बोल बोल कर सिर्फ अच्छी बातें कहता है, करता नहीं वह उस सुंदर फूल की तरह है, जिसमें खुशबू नहीं है। और जो व्यक्ति मीठी बोली से अच्छी बातें कहता है और उन पर अम्ल भी करता है , वह उस फूल कि तरह है जिसमे रूप व सुगंध दोनों हैं।

(३१) जब तक बुरे कर्म का फल नहीं मिलता तब तक मुर्ख उसको मीठा समझता है मगर जब वह पक जाता है और फल देने लगता है तब उसकी कड़वाहट का मजा मिलता है।

(३२) मुमकिन है कि एक आदमी युद्ध में हजारों को पराजित कर दें लेकिन जो आदमी अपने आप पर विजय प्राप्त कर लेता है वह सबसे बड़ा और सच्चा सूरमा है ।

(३३) यह न सोचो कि पाप का फल हमको कभी नहीं मिलेगा जैसे एक बूंद से तलाब भर जाता है वैसे ही थोड़े थोड़े पाप से आदमी बड़ा पापी बन जाता है।

(३४) जब दिल में नफरत जलन और अज्ञान की आग बराबर जल रही है तो फिर हंसी खुशी और शांति कैसी ? अंधेरे में रहने वालों ! तुम रोशनी को क्यों नहीं ढूंढते ?

(३५) दूसरों को उपदेश सुनाने से अपने को उपदेश देना कहीं अच्छा है। दूसरों को प्रभावित करने से पहले अपने आप को जीत लेना कठिन है।

(३६) जो गाफिल था और अब सुधर गया है वह चांद की तरह बादलों से निकलकर अपनी दुनिया की रोशन (आलोकित) करता है।

(३७) जो धर्म को छोड़ देता है, झूठ बोलता है और परलोक का मजाक उड़ाता है वह हर किस्म की बुराई कर गुजरेगा। जो तुमसे नफरत करते हैं उसे नफरत न करो, बल्कि नफरत से बचते हुए अगर मिल जाए तो भी उसके दरम्यान खुशी से गुजरान करो।

(३८) जो भलाई का जवाब बुराई में देते हैं वो जानवर हैं। जो बुराई का जवाब बुराई में और भलाई का जवाब भलाई में देते हैं वे आदमी हैं। जो बुराई का जवाब भलाई में देते हैं वो देवता हैं। जो इन सबसे परे हैं, भलाई उनकी जिन्दगी का अंग बन गई हैं, जो ख्वाब में भी किसी बुराई नहीं कर सकते वो साधू हैं।

उपदेश लेने के बाद जिज्ञासु का कर्तव्य

गुरु धारण कर लेने के बाद तो सत्संगियों को दो बातों से विशेष अलग रखा जाता है :-

(१) किसी दूसरे सत्संग या गैर सत्संगियों कि सोहबत में जाना

(२) स्त्रियों कि संगति में रहना।

सत्संग में शामिल होने पर जो चीज गुरु से मिलती है उसकी रक्षा नितांत आवश्यक है इसलिए शुरू में किसी दूसरे सत्संग में जाने या अन्य साधु महात्मा (गुरु के अतिरिक्त) के दर्शन इत्यादि की आज्ञा नहीं देते। जब बरगद का पेड़ लगाया जाता है तो वह बहुत कोमल होता है, जानवर भी नष्ट कर सकता है, गर्म सर्द हवा भी उसे मार सकती है, लेकिन रक्षा करने उसमें पानी देने और देखभाल करते रहने से वह बड़ा हो जाता है। उस वक्त ना उसमें पानी देने की जरूरत है और ना उसे कोई नुकसान पहुंचा सकता है। वह बड़ा होने पर औरों की रक्षा करता है अपने पास आने वाले को आराम पहुंचाता है सुख शांति देता है।

यही हाल शुरू शुरू में सत्संगी का होता है। गुरु अपनी इच्छाशक्ति (Will Power) से उसके मन में परमात्मा की भक्ति और प्रेम का अंकुर पैदा कर देता है। दूसरे के सत्संग में जाने से या अपनी पत्नी के अलावा किसी अन्य स्त्री के संगति से ईश्वर प्रेम के अंकुर के नष्ट हो जाने का डर रहता है इसलिए यह दोनों प्रतिबंध लगाए जाते हैं।

और जमात यानी दूसरे सत्संग में जाने से वहां के वातावरण का असर सत्संगी पर पड़ता है। वह अपने यहां की और दूसरे सत्संग की हर एक चीज की तुलना करने लगता है। यहां तक कि अपने गुरुदेव तथा दूसरे आचार्यों की तुलना का भाव भी अपने मन में लाने लगता है। जो सर्वदा अनिष्ट कारक है। गुरु धारण करने के बाद उसे यह अधिकार नहीं रहा जाता।

इससे पहले वह चाहे कहीं घूमे फिरे, हरेक जमात के तौर तरीके देखे, हरेक आचार्य की एक दूसरे से तुलना करें और सब तरह अपनी तसल्ली करें।

इस काम में चाहे उसका एक जन्म तो क्या और भी कई जन्म बीत जाए तो कोई हर्ज नहीं, परंतु जब एक जगह मन जम जाए या जब किसी ऐसे समर्थ पुरुष पर अपना ईमान ले आवे, जो उसे संसार में उसे अच्छा लगे, और उसके लिए वह सब कुछ कुर्बान करने को तैयार हो जाए और उसे अपना गुरु धारण कर ले तब उसकी दशा दूसरी हो जाती है। फिर उसके लिए पवित्रता स्त्री का भाव लेकर रहना ही हितकर और आनंद प्रद है। कबीर साहब ने कहा है :-

पतिबरता को सुख घना, जाके पति है एक।

मन मैली विभीचारिनी, ताके खसम अनेक॥

पतिबरता पति को भजे, और ना आन सुहाय।

सिंह बच्चा जो लंघना, तो भी घास न खाय॥

नैना अंतरी आव तू ने, नैन झांपी तोही लेउं।

ना मैं देखौं और को, ना तोहि देखन देउं॥

पतिबरता के एक तू, और न दूजा कोय।

आठ पहर निरखत रहैं, सोई सुहागिन होय॥

एक चित्त होय न पिय मिलैं, पतिव्रत ना आवैं।

चंचल मन चहुँ दिसि फिरै , पिय कैसे पावै ॥

पतिबरता पति को भजै , पति पर घर विश्वास ।

आन दिशा चितवै नहीं , सदा पिव की आस ॥

कबीर रेख सिंदूर अरु , काजर दिया न जाए ।

नैनन प्रीतम रम रहा, दूजा कहां समाय ॥

आठ पहर चौंसठ घड़ी , मेरे और न कोय ।

नैना माही तू बसै , नींद को ठौर ना होय ॥

एक दूसरा कारण यह भी है कि सभी सत्संग (हर जमात) एक से नहीं होते और न हर साधु महात्मा पर विश्वास ही किया जा सकता है क्योंकि अब इस वेष में बहुत से कपटी लोग होते हैं।

एक और कारण यह भी है कि किसी गैर जमात में जाने पर कोई आदर की निगाह से नहीं देखता । इससे अपनी संगति और अपने सिलसिले के बुजुर्गों की बेइज्जती होती है । इसलिए सत्संगी को किसी दूसरे सत्संग में नहीं जाना चाहिए जब तक कि गुरु की खास तौर पर उनकी अनुमति ना दे दे, क्योंकि वे ही इस बात को ठीक समझते हैं कि कहां जाना हितकर है और कहां अहितकर ।

एक मुसलमान सज्जन परम संत जनाब मौलवी अब्दुल गनी साहब के शिष्य थे । वह बहुत ऊंचे अभ्यासी थे और इनकी आत्मिक दशा बहुत अच्छी थी । यहां तक कि परम संत महात्मा रामचंद्र जी महाराज ने अपने कई शिष्यों को उनके पास आध्यात्मिक शिक्षा के लिए भेज दिया

था। इन मुसलमान अभ्यासी (जिनका नाम यहां उल्लेख नहीं किया जाता) की एक तांत्रिक (भज्जा शाह) से भेंट हुई जिन्होंने उन्हें कई चमत्कार दिखाएं। मौलवी साहब अति उच्च कोटि के महात्मा थे और चमत्कारों से बहुत दूर रहते थे।

उन्हीं मुसलमान सज्जन पर तांत्रिक का ऐसा असर पड़ा कि उनके दिमाग में यह ख्याल बहुत मजबूती से बैठ गया कि हर एक फकीर अलग-अलग एक चीज में पूर्ण ज्ञानी होता है। एक ही फकीर में सारे गुण नहीं होते। इसलिए मौलवी साहब को उन्होंने पत्र लिखा और अनुमति चाही कि उन्हें और फकीरों के पास जाकर तालीम प्राप्त करनेदें। पहले तो मौलवी साहब ने इंकार कर दिया, लेकिन जब उन्होंने कई बार इच्छा प्रकट की और सख्ती से पत्र लिखा तब मौलवी साहब ने नाराज होकर आज्ञा दे दी। फिर क्या था ? जो कुछ गुरु से मिला था वह समाप्त हो गया और एकदम कोरे रह गए। बाद में हजार सर मारा सिफारिशें पहुंचाई, किन्तु मौलवी साहब ने क्षमा नहीं किया। अब तक वे सज्जन जीवित हैं और मारे मारे फिरते हैं।

इसी तरह स्त्रियों की संगति भी सत्संगी के लिए भी अहितकर है। गैर स्त्रियां तो दूर अपनी मां और बहनों तक के साथ अकेले में बैठने की इजाजत नहीं है। मन बड़ा धोखेबाज है। हर समय इससे सावधान रहना चाहिए। औरतों की संगति में बैठकर तरह तरह के ख्याल पैदा होते हैं और इस मन का कोई भरोसा नहीं है। विषैले सर्प की तरह न जाने कब डंक मार दे। बड़े-बड़े ऋषि मुनि स्त्री की संगति से धोखा खा चुके हैं। इसलिए स्त्रियों के साथ नहीं बैठना चाहिए वह भी खासतौर पर अकेले में। सिर्फ जहां तक जरूरी हो वहां तक अपना काम रखें वरना अलग रहे अपने गुरु के ध्यान में रहने की कोशिश करें।

क्या पुनर्जन्म होता है ?

संतों ने आवागमन को सत्य माना है और ऋषियों ने भी इसकी पुष्टि की है। भगवान बुद्ध भी इसको सही बताते हैं। वेद, शास्त्र और हिंदुओं की धार्मिक पुस्तकें इसको सत्य मानती है। किंतु ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है जो आवागमन में विश्वास नहीं रखते। यह विषय अपने अपने अनुभव का है। यद्यपि आजकल आवागमन के विषय पर अनेकों Research (खोज) हुई हैं और हो रही है। जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि पुनर्जन्म की बात सही है किन्तु कोई इसको माने या ना माने हमें इससे कोई बहस नहीं और ना हम इस तर्क वितर्क में पड़ना चाहते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि अपने मन को शुद्ध करते चलो। यही महामंत्र है, सूफियों का 'इस्मेआजम' है। जितना मन शुद्ध होगा, उतनी ही बुद्धि शुद्ध होगी और जैसे जैसे बुद्धि शुद्ध होती जाएगी। वैसे-वैसे सच्चा ज्ञान भी प्राप्त होता जाएगा।

तर्क वितर्क बातचीत और बहस मुबाहिसा करने से दिमाग की कसरत अवश्य हो जाती है जिसके बाद थोड़ी देर के लिए वह शांत हो जाता है और आनन्द का अनुभव करने लगता है। तर्क वितर्कका बीएस इतना ही फायदा है। लेकिन इसके साथ साथ एक बड़ा नुक्सान भी होता है। तर्क वितर्क करने वाले मनुष्य को झूठा अभिमान अपनी जानकारी का हो जाता है। जिससे बड़ी मुश्किल से पीछा छूटता है। मन की सफाई, अभ्यास और तप के द्वारा होती है। बिना इसके कभी मन शुद्ध नहीं हो सकता, मन की सफाई हुए बिना बुद्धि शुद्ध नहीं हो सकती और बुद्धि की शुद्धि हुए बिना सच्चा ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए तर्क वितर्क करना अपना और दूसरे का समय नष्ट करना है।

कुछ लोगों का कहना है कि मनुष्य निचली योनियों से ऊपर की योनियों में उन्नति करता है, ऊँची से नीची योनियों में नहीं जाता । इस बात के पक्ष में वे यह दलील पेश करते हैं कि जो विद्यार्थी नीची कक्षाओं को पास कर लेते हैंवे या तो ऊँची कक्षाओं में जाते हैं या फेल हो जाने पर उसी कक्षा में रह जाते हैं किंतु किसी भी हालत में नीची कक्षा में नहीं जाते। इसलिए मनुष्य मरने के बाद या तो ऊँचे लोकों में जाता है या फिर मनुष्य बनता है किन्तु नीची योनियों में नही जाता।

उदाहरण तो बहुत अच्छा है और अधिकतर होता भी ऐसा ही है। किन्तु कोई विद्यार्थी बीमार हो जाए और वह बीमारी ऐसी हो जिसका प्रभाव मस्तिष्क पे ऐसा पड़े कि उसका स्मरण शक्ति जाती रहे (जैसा कि कभी-कभी टाइफाइड की बीमारी में या सिर पर चोट पर लग जाने से हो जाता है) तो क्या उसे नए सिरे से पढ़ना नहीं पड़ता ?

संभव है आपको ऐसे आदमियों से मिलने का अवसर ना हुआ हो किंतु मैंने ऐसे कई मनुष्य देखे हैं। किसी किसी को तो आदमी की बोली भी नए सिरे से सीखनी पड़ती है। यदि कोई मनुष्य मुद्दतों तक किताबों से कोई वास्ता न रखे और आवारा फिरता रहे तो क्या उसको शुरू से किताबें नहीं पढ़नी पड़ेगी ? यह अवश्य है कि ऐसी हालत में उसको समय कम लगेगा और जल्दी ही उसको पिछला सब ध्यान में आ जाएगा। मामूली हालात में मनुष्य को मरने के बाद मनुष्य चोला ही मिलता है लेकिन यदि किसी ने सदाचार का पाठ (इखलाकी सबक) जो मनुष्य योनि में प्राप्त किया था बिल्कुल भुला दिया है और पशुओं जैसा व्यवहार करने लगा है तो उसे पशु योनि में अवश्य जाना होगा।

सत्य तो यह है कि जहां चढ़ना है वहां भी उतरना भी है। अगर मनुष्य देवता हो सकता है, अगर जानवर मनुष्य बन सकता है, तो यह भी अवश्य है कि देवता मनुष्य बन जाए मनुष्य

जानवर बन जाए। इसमें कोई बात सिद्धांत के विरुद्ध नहीं दिखाई देती। उतरना, चढ़ना ऊँची-नीची योनियों में आना जाना दिल और दिमाग की कमी बेशी पर निर्भर है। यह कौन कह सकता है कि अच्छा दिल बुरा नहीं हो सकता या बुरा दिल अच्छा नहीं बन सकता। जब अच्छा दिल बुरा हो सकता है और बुरे कर्म कर सकता है तो अच्छा मनुष्य भी बुरी योनियों में जा सकता है।

दुनिया में अक्सर देखा गया कि बुद्धिमान से बुद्धिमान मनुष्य भी बेवकूफों (मूर्खों) जैसी हरकत कर बैठता है। ऊँचे ऊँचे चरित्र के आदमी भी कभी-कभी पशुओं से काम कर बैठते हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मन में भलाई और बुराई दोनों ही रहती है और जो मनुष्य मन के स्थान पर है उसको दोनों ही बातों का सामना करना पड़ता है। अच्छाई में व्यवहार करेगा तब अच्छे कर्म होंगे और बुराई में बुरे। कर्म फल भी अवश्य मिलती ही हैं। अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे का बुरा होगा ही। जिस प्रकार के कर्म होंगे वैसा ही योनि मिलेगा। यह प्राकृतिक बात है इसको चाहे कोई माने या ना माने। किन्तु सच्ची बात यही है जिसकी शिक्षा ऋषियों, संतों और महात्माओं ने दी है।

जो मनुष्य अभ्यास करके मन के पार निकल गये उनकी दूसरी बात है। लेकिन वह भी सदा सावधानी बरतते हैं और बरतनी भी चाहिए, क्योंकि जब तक शरीर है तब तक मन भी किसी न किसी रूप में मौजूद है जब तक मन मौजूद है तब तक हर समय खतरा है। इसलिए धर्म शास्त्र की पाबंदी हमेशा हर साधु और फकीर पर वाजिब है उससे कभी नहीं हटना चाहिए। जो ऐसा नहीं करते वे मुंह के बल गिरते हैं ऐसे उदाहरणों की इतिहास में कोई कमी नहीं है।

दुनिया में होश आने पर प्रत्येक मनुष्य के दिल में स्वभाव से यह सवाल पैदा होता है कि हमारे यहां आने का कोई न कोई आशय अवश्य है और वह क्या है ? यह विचार तो प्रत्येक के मन में किसी न किसी समय अवश्य पैदा होता है, केवल उन लोगों को छोड़कर जो मनुष्य के रूप में

पशु हैं और पागल अवस्था में हैं। किंतु अधिकतर मनुष्य नित्य के काम-काज में लगे होते हैं जिसमें इस विचार को भूल जाते हैं।

जब जब दुनिया के झंझट दुख क्लेश और संकट आकर सताते हैं और यह मालूम होने लगता है कि यह दुनिया सुख की जगह नहीं है तब आत्मा पर से पर्दा हटने लगता है और फिर वही सवाल आ खड़ा होता है कि इस दुनिया में हमारे आने का आशय क्या है। इसी तरह यह प्रश्न आता जाता बना रहता है। कोई कोई ऐसे भाग्यशाली होते हैं जिनके हृदय पर इसका गहरा असर पड़ता है। जिसके कारण यह इसी उधेड़बुन में लग जाते हैं और देर सवेर अपने ध्येय अथवा लक्ष्य को मालूम करने में सफल हो जाते हैं।

लक्ष्य तो इनको मालूम हो जाता है और उन्हें यह दृढ़ निश्चय भी हो जाता है कि असली लक्ष्य है किंतु उसके प्राप्त करने का प्रयत्न करने में डरते हैं। इन लोगों में से विरले ही ऐसे निकलते हैं जो लक्ष्य प्राप्त करने के लिए रास्ता चलना शुरू करते हैं । लेकिन जब रूकावटे आती है तब घबरा जाते हैं और थक कर बैठ जाते है। इनमे से कोई कोई ऐसे साहसी और दृढ़ प्रतिज्ञ होते हैं कि बाधाएं आने पर भी घबराते नहीं हैं बल्कि और ज्यादा मजबूत और सावधान होकर चलते हैं। गिरते हैं उठते है ठोकर खाते है थोड़ी देर बेहोश हो कर पड़े रहते हैं , लेकिन होश आने पर कपड़े झाड़कर फिर खड़े हो जाते जाते। फिर चल पड़ते है और कहते जाते है :-

मरेंगे यारों तलब में हक की,
जो नाम तालिब लिखा चुके हैं।

इनके लिए कामयाबी मिलती है। यह एक न एक दिन अवश्य सफल होंगे। ऐसी विभूतियाँ धन्य है, आदर के योग्य हैं,और पूजने लायक हैं। गिरना स्वभाविक बात है लेकिन गिर कर खड़े हो जाना भी स्वाभाविक है। क्या आप नित्य प्रति नहीं देखते कि जब छोटा बालक चलना

शुरू करता है तो पग पग पर गिरता है और चोट भी खा जाता है ? कभी तो ऐसे लगने लगता है कि अब थोड़ी देर के लिए वह नहीं चलेगा। लेकिन इधर गिरा नहीं कि फिर खड़ा हो गया, रोया चिल्लाया और फिर चलने लगा। हजार बार गिरता है और हजार बार खड़ा होता है। उसे गिरने और गिर कर दुबारा चलने की कोई गिनती ही नहीं है। यह कर्म तब तक जारी रहता है जब तक वह अच्छी तरह चलने नहीं लगता और एक दिन गिरने का ख्याल तक नहीं आता।

अभ्यासी भाइयों को बालकों के इस उदाहरण से शिक्षा लेनी चाहिए। एक बार गिरने पर दोबारा सावधानी से काम लो। रास्ता देख कर चलो। ईट पत्थरों से बचो। इस सावधानी पर भी गिर पड़ते हो तो चिंता मत करो। उठ बैठो, हिम्मत बांधों और बुराइयों से तौबा कर के आगे बढ़ते चलो और भविष्य के लिए और भी अधिक् सावधानी से काम लो। परमात्मा या सतगुरु से सहायता की प्रार्थना करो, उनके सामने रोओ और गिड़गिड़ाओ और फिर चल पड़ो। जब कभी नाकामयाबी या असफलता तुम्हारे सामने आये तो उससे तुम निराश मत होओ, बल्कि यह यह सोच लो कि ऐसा होना ईश्वर को मंजूर था विधाता कीऐसी ही मर्जी ठी या यह हमारे पिछले कर्मों का फल था जिसे हमे भुगतना ही था। विश्वास रखो कि अगर तुम निरंतर प्रयत्न करते रहोगे तो अवश्य सफल हो जाओगे। जो लोग खुद कोशिश करते हैं परमात्मा उनकी सहायता करता है।

अपने असली विषय से दूर जा पड़े। प्रश्न यह है कि हमारे इस दुनिया में आने का आशय क्या है ? आशय सब का एक है चाहे वह किसी भी मत का हो या किसी भी सिद्धांत का हो। अंतर केवल कहने कहने का है कोई कहता है कि परमात्मा का दर्शन करना जीवन का आदर्श (या लक्ष्य) है और कोई आत्म-साक्षात्कार को आदर्श मानता है कोई कहता है कि अपने आप को जानना आदर्श है और कोई सुख की प्राप्ति को आदर्श बताता है। कोई कहता है कि सच्चा ज्ञान प्राप्त करना जीवन का आदर्श है और कोई हमेशा की जिन्दगी हासिल करने को आदर्श बताता है कोई परमात्मा से मिलने और शक्ति प्राप्त करने को आदर्श बताता है और कोई मुक्ति या निर्वाण

की प्राप्ति को आदर्श समझता है । कोई कहता है कि प्रकृति पर अधिकार पाना मनुष्य जीवन का आदर्श है। और कोई परमात्मा बनने के लिए मनुष्य के जीवन को आदर्श मानता है।

कहाँ तक गिनाया जाए हजारों तरीकों से एक ही बात कही जाती है। अज्ञानी इसमें भेद देखता है। ज्ञानी सब में अपने प्रीतम का दर्शन करता है। जीवन का असली ध्येय यही है कि हम Materialistic (स्थूलवादी या भौतिकवादी) न रहे Spiritual (अध्यात्मवादी) हो जाए। इन सब बातों में कोई अंतर नहीं है।

बिना ज्ञान प्राप्त हुए कोई वस्तु नहीं हासिल होती। बिना संघर्ष और प्रयत्न के ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। जिस वस्तु को प्राप्त करना है उसके समीप जाने उसको समझने और उसको प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना आवश्यक है। इन्हीं यत्नों को ज्ञान कर्म और भक्ति भी कह सकते हैं।

ज्ञान का अर्थ है जान लेना। जो मनुष्य असलियत को जान लेता है फिर उसके लिए दिक्कत नहीं रहती। भौतिक जीवन उसको उस समय तक डराता है जब तक ज्ञान नहीं पैदा होता। ज्ञान के आते ही उसका भय जाता रहता है और उस पर अधिकार हो जाता है।

यही मतलब कर्म करने का है। कर्म करने से शरीर की सब रंगों और रेशों में हरकत आती है जो मनुष्य के दिल दिमाग और सारे अंगों पर असर करती है। इसके प्रभाव से उनकी हालत बदलती है और हालत के बदलने से असलियत का अनुभव होता है। भौतिकता को पराजित करने की और अधिक शक्ति आ जाती है। जैसे बढई आरी से लकड़ी को चीरकर टुकड़े-टुकड़े कर देता है, वैसे ही कर्म करने वाला भौतिकता पर विजय प्राप्त करके उससे तरह-तरह की सेवा लेता है और जब उनसे जी भर जाता है तो मोक्ष गति की इच्छा पैदा हो जाती है।

उपासना भक्ति और प्रेम यह भी माया पर विजय पाने के साधन हैं। भौतिक वस्तुओं को ही माया कहते हैं। इसका बंधन बड़ा कठोर है जब तक इस माया पर विजय प्राप्त न की जाए इसका बंधन नहीं छूटेगा और सफलता नहीं मिलेगी।

अब प्रश्न उठता है कि इस माया पर किस तरह काबू पाया जाए ? इसका उत्तर यह है कि जिस ने माया पर विजय प्राप्त कर ली, जिसने रास्ता चल लिया है, ऐसे व्यक्ति से संपर्क स्थापित करके, तरकीब पूछ कर, उसके बतलाए हुए तरीके पर चलकर माया पर विजय प्राप्त की जा सकती है। इसी तरीके का नाम भक्ति योग है।

कुत्ते और बिल्ली में या बिल्ली और पक्षियों में कितना बैर भाव होता है, लेकिन एक ही मालिक की कुत्ते बिल्ली और पक्षी आपस में नहीं लड़ते बल्कि प्रेम पूर्वक रहते हैं। समय पड़ने पर एक दूसरे की सहायता भी करते हैं। इसी तरह कुत्ते बिल्ली ही नहीं एक मालिक के छोटे बड़े सभी जानवर आपस में प्रेम पूर्वक मिलकर रहते हैं, एक गड़ेरिया का कुत्ता कभी अपने मालिक की बकरी पर हमला नहीं करता बल्कि उसकी रक्षा करता है।

इसी प्रकार जबी अभ्यासी के दिल में मालिक का सच्चा प्रेम पैदा हो जाता है यानि आदमी सच्चे मायने में उसको अपना मालिक मान लेता है तो माया उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। वह ऐसी दशा में उसकी सहायता करती है इसके साथ ही प्रेमी अभ्यासी में अपने प्रीतम मालिक के कुछ न कुछ गुण आंशिक रूप में आ जाते हैं। इसलिए माया को मालिक के प्रेमी का लोहा मानना ही पड़ता है उसे अनुकूल या अधीन होना पड़ जाता है।

सारांश यह है कि समुद्र में जाने का रास्ता चारों ओर से है, चाहे किसी भी दिशा से जाएं। पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण कहीं से जाओ गिरना तो समुद्र में ही है। इसी तरह परमेश्वर एक अथाह सागर है जीवन उस में मिलने वाली नदी नाले के सामान है। छोटी छोटी नदियाँ और नाले

बड़ी नदियों में मिल जाते हैं क्योंकि उनकी पहुंच समुद्र तक नहीं है। वे किसी बड़ी नदी का सहारा लेकर अपने आप को समुद्र में लय कर देते हैं।

ऐसे ही साधारण अभ्यासी कि पहुँच मालिक तक नहीं है। वह गुरु के सहारा लेकर अपने आप को मालिक में लय कर देता है। कौन सा मार्ग सुगम है। इस पर लड़ने झगड़ने से क्या फायदा ? असली मतलब तो यह है कि मालिक की ओर देखना चाहिए जो कि मनुष्य जीवन का ध्येय है। चाहे किसी रास्ते से चलो उस तक पहुंचना लक्ष्य है। किसी को कोई रास्ता पसंद है तो किसी को कोई। जो जिस राह चल चुका है वह उसी को अच्छा बताता है।

संतों का रास्ता प्रेम का रास्ता है और यही सबसे छोटा सरल और सुगम रास्ता है। जो रास्ते के ऊपर लड़ रहा है उसने अभी तक अपने असली ध्येय यानि समुद्र के समान विशाट महान परमेश्वर को नहीं देखा है। रास्ते का होना तो आवश्यक है। कर्म भक्ति ज्ञान आदि सब रास्ते हैं। असली ध्येय परमात्मा तक पहुंचना है।

प्रत्येक आदमी की शक्ल सूरत और आदतें एक सी नहीं होती। फिर एक ही तरीका सब के लिए ठीक कैसे हो सकता है ? कोई मनुष्य तंदुरुस्त है, उसको अपने शारीरिक बल पर भरोसा है तो वह कर्म अच्छी तरह कर सकेगा और उसी के द्वारा उसको सफलता जल्दी मिलेगी। दूसरा आदमी शरीर से कमजोर है लेकिन दिल उसका मजबूत है और सबके लिए उसके हृदय में प्रेम और सहानुभूति है। ऐसे व्यक्ति के लिए भक्ति सरल और सुगम होगी। कोई व्यक्ति बुद्धिमान चतुर और गंभीर है, हर काम को सोच विचार करता है तो ऐसे व्यक्ति के लिए ज्ञान मार्ग ठीक रहेगा। रास्ता ऐसा होना चाहिए जो अभ्यासी के स्वभाव के अनुकूल हो और उसे अच्छा लगे। तभी वह कबूल करेगा, उस पर चलेगा और सफलता प्राप्त करेगा। अन्यथा सम्भव है कि उसे असफलता का मुंह देखना पड़े।

मनुष्य जीवन का प्रभाव और मन के रूप

याद रखो, जब तक तुम अपने मन की बात पूरी होने में सुख मानते हो और पूरी ना होने पर दुख तब तक तुम्हें सचमुच अपने असली सुख दुख का पता नहीं। असली सुख तो वह है जो सदैव रहे जिसका आधार कोई बाहरी वस्तु न हो जो अपनी चीज हो, जो हमेशा एक रस रहे और जो आत्म स्वरूप यही असली सुख है। जब इस सुख के अभाव का ज्ञान हो जाता है, जब सुख के नाम पर होने वाले दुखों से मनुष्य उब उठता है तब उसकी किसी भोग सुख की प्रवृत्ति नहीं होती और संसार की सारी वस्तुओ से अरुचि हो जाती है। यह दुख उसको परम सुखमय आत्मा का भगवान का साक्षात्कार करा देता है। यह जो मनुष्य आत्मा परमात्मा से विमुख हो रहा है उसका प्रधान कारण भोग सुख की ममता है। भोग सुख में रुचि प्राप्ति और भोग तीनों वासना ही है। भोग वासना का नाश होते ही संसार से सहज ही में वैराग्य हो जाता है तथा भगवान से प्रेम होकर उनकी नजदीकी होती है।

इन्द्रिय सुख को, जिसको तुम जीवन कहते हो, वह जीवन नहीं है। वह तो मृत्यु प्रवाह है। शिशु अवस्था गई, जवानी आई, वक्त पर जवानी बुढ़ापे में बदल गई, कोई अवस्था स्थायी नहीं है। प्रत्यक्ष परिवर्तन हो रहा है। उम्र खत्म होती जा रही है। गंगा की धारा बहती दिखाई देती है, प्रत्यक्ष समस्त जल बहा जा रहा है जो बह गया वह बह गया जो आ रहा है वह भी बह जाएगा। यह परिवर्तन नहीं होता जो बाल्य, युवा, वृद्ध, सभी अवस्थाओं में एक सा रहता है। शरीर तो हाड मांस मज्जा मल मूत्र का थैला है नष्ट होने वाला है प्रत्यक्ष में नष्ट हो ही रहा है। इसमें जो मोह पैदा हो गया तो उसे असली जीवन में विमुख बनाकर तुम को भ्रम में डाल दिया है इस भ्रम का नाश होते ही आत्मा का प्रकाश होने लगता है और अमर जीवन, जो तुम्हारा असली स्वरूप है प्राप्त होने लगता है।

यह मन बड़ा दुष्ट और धोखेबाज है। जैसा प्रेम परमार्थ का, इसको करना चाहिए वैसा नहीं करता और अधीनता का शत्रु है। दीन भाव कभी नहीं लाता है। मान मर्यादा इसकी खुराक , दीन अधीन बनने से, भजन से तरंगे उठता है, बड़ा फरेबी और कपटी है। तीनों लोगों को इसने भरमाया है। ऋषि मुनि सब इससे हार गए। कोई भी इससे नहीं बचा।

जिन्होंने मार मन डाला, उन्हीं को सुरमा कहना।

बड़ा बैरी ये मन घट में, इसको वश करना कठिन है।

पड़ो तुम इसी के पीछे और सब हो तन तजना,

गुरु की प्रीति कर गले, बहुर घट शब्द को सुनना।

मान लो बात यह मेरी करो मत और कुछ जितना।

हार जब जाए मन तुमसे चढ़ा दो सूरत को गगना।

तीर तुपक से जो लड़े सो तो सूर न होय,

माया तज भक्ति करें सूर कहावें सोय।

3 लोक चोरी भई सबका धन हर लीन,

बिना सीस का चोरथा, पड़ा न कोई चीन्ह

सतगुरु की सहायता के बिना किसी की ताकत नहीं है जो मन को जीत सके। मनुष्य निर्बल और बेबस है। इसकी सामर्थ्य नहीं है कि कुछ भी कर सके। जो कुछ होता है परमात्मा की दया और मौज से होता है। सिवाय सतगुरु के और किसी की शक्ति नहीं है कि मन को सुधार सके।

प्रेमीजन अपनी सफाई और अच्छाई जो सतगुरु के सत्संग में प्राप्त होती है देख कर अपना भाग्य सराहते हैं कि कोई पिछला भाग्य उदित हुआ जिसके कारण सतगुरु की शरण में आया हूं और मेरे इस दुष्ट मन से रिहाई हो रही है। नहीं तो कुछ पता नहीं लगता कि कहां जा रहा हूं। जिन्होंने सतगुरु की शरण ले ली उसका बेड़ा पार हो जाएगा। जैसे स्त्री की लाज पति को है वैसे ही प्रेमी की लाज मालिक को है। हर समय उसकी रक्षा और संभाल होती रहती है।

मैं सेवक समरत्थ का, कबहु ना होय अकाज,

पतिव्रता नंगी रहे, तऊ है पति को लाज।

दासदुखी तो मैं दुखी, आदि अंत तिहूँ काल,

पलक एक में प्रगट होऊ, छिन मैं करूँ निहाल॥

मनुष्य के घट में यह मन बड़ा बदमाश दगाबाज और फरेबी बैठा है इसकी दुरुस्ती के लिए पहले सत्संग की जरूरत है। जैसे मैले कपड़े को धोबी पहले पानी में साफ करता है फिर पत्थर पर फटकारता है। वैसे ही पहले सतसंग रूपी जल में मन साफ किया जाता है। बाद में इसके रगड़ाई होती है। इसके अंतर की काई निकलती है। इसलिए तकलीफ के वक्त घबराना नहीं चाहिए, बल्कि गुरु का कृतज्ञ होकर भक्ति में आगे की ओर ही कदम बढाते जाना चाहिए।

कबीर मन मैला भया, मन में बहुत विकार,

सो मन कैसे धोइए, साधु करो विचार।

गुरु धोबी शिष कपड़ा, साबुन सिरजनहार॥

सूरत सिलाकर धोइए, निकले मैल अपार॥

कबीर मन पर्वत हुआ, अब मैं पाया जान।

टाँकी लागी प्रेम की, निकसी कंचल खान॥

मन के दो अंग हैं, कुमन और सुमन या कुमति और सुमति अर्थात संसारी और परमार्थी या तामसी और सात्विक मन कुमति में काम क्रोध आदि पैदा होते हैं। सुमति में शील, क्षमा, दया व् दीनता प्राप्त होती है। विरोध और कठोरता कन का स्वभाव है और निडर होना सूरत का स्वभाव है।

मन और इंद्रियों के दमन हेतु और मतों में जो युक्तियां हैं उनका प्रभाव बाहर के स्थूल अंगों पर पड़ता है, अंतर के अंतर में असर नहीं होता। जैसे एक रोगी है, उसे एक फोड़ा है, उस फोड़े का इलाज हो रहा है। अगर सिर्फ फोड़े को चीर कर मवाद निकाल दिया जाए और अंदर के कील को निकालकर दूर न किया जाए तो वह फोड़ा जैसे का तैसा बना रह जाएगा। संतमत में विकारों का का जो गुप्त बीज पहले उसको निकालने का प्रबंध किया जाता है। इसमें जो युक्ति बताई जाती है उसका अंतर के अंतर में होता है केवल बाहर (आवरण पर) नहीं होता है।

और मतों में मन और इंद्रियों के दमन के लिए साधक अपना बल लगाते हैं, जिससे आपा पुष्ट होता है अहंकार बढ़ता है। संत मत में अपना पौरुष छोड़ना पड़ता है और अपने को निर्बल और अधीन समझना होता है। अहंकार विकारों की जड़ है और संतमत में इसी अहंकार को काट दिया जाता है। समर्थ गुरु उसके सिर पर दया का हाथ रखते हैं और वह उसके कर्म काटते हैं। तब उसको विश्वास होता है कि जो कुछ होता है वह सब सतगुरु की मौज से होता है और वही सद्गुरु कर्ताधर्ता है। उसकी करवाई होती रहती है। जिससे अहंकार पुष्ट नहीं होता। वह

अहंकार की कार्रवाई नहीं होता। उससे पिछले कर्म कटते हैं और आगे के लिए कर्मों का सिलसिला बंद हो जाता है।

जब जीव अपना अहंकार छोड़ देता है तब कहता है और पुकरता है और प्रार्थना करता है कि मुझ में कोई गुण नहीं है, मैं नालायक हूं। हे सतपुरुष दयाल आप ही ने शरण में लिया और आप ही को मेरी लाज है, जैसे तैसे मेरी नाव पार लगाइए।

मैं नालायक हूँ, इसमें कुछ शक नहीं।

दया करे जो आप, अचरज नहीं।

कसूरों को बखशों मेरे हे दयाल,

गरीबी पै मेरी करो अब ख्याल।

दया के भरोसे बने सब कसूर,

मेहर बख्श देओ न आली हुजुर।

मैं तुम्हारा हूं और तुम हो मेरे सही,

पिता पुत्र का नाता पूरा याही।

पिता तुम हो, और मैं हूं बालक समान,

करो मेहर दीन और निबल मोहि जान।

जब सिवाय ईश्वर की चाह के और सब दूर चाहे दूर हो जाती है तब अभ्यासी हर ओर कर्ताधर्ता सच्चे मालिक को देखता है और मग्न रहता है। जब तक अपना मैंपन है, वृथा अहंकारी

बनकर दुख सुख का भागी बनता रहता है। कहने का आशय यह है कि सतगुरु दयाल जीवो पर अति दया करके उसके कर्मों का कुछ भी ख्याल न करते हुए कर्म काटते रहते हैं और अपनी कृपा से निज घर में पहुंचाते हैं। सारे कर्म भोग कर नहीं काटे जा सकते, कुछ गुरु कृपा से भी कटते हैं। जब गुरु कृपा से अहंकार मिट जाता है तो सूरत ऊपर को खिंच जाती है। अहंकार का बीज ही नाश हो जाता है। उसमें फिर फल देने की ताकत नहीं रहती।

इसलिए सतगुरु खोजो उनकी शरण करो अपने आप उनके समर्पण कर दो, उनके आदेशों का पालन करो, मन को वश में करो, सत पर चलो। सत ही तुम्हारा स्वभाव हो जाए, तो एक न एक दिन सतगुरु की दया से तुम मालिक के दरबार में प्रवेश पा जाओगे, जहां प्रेम है, आनंद ही आनंद है, अमर जीवन है। ऐसा जीवन पाकर फिर इस भवसागर में आना नहीं होता, आवागमन छूट जाता है।

सागर का मोती

- गुरु की शरीर सेवा अपने तन से करो सत्संग की मदद करो दिल से भलाई चाहो ग्रुप की तकलीफ थी और उसके उद्धार के लिए परमात्मा से प्रार्थना करो सबका भला चाहो जो खिदमत कर सको करो जो काम करने को बताया जाए उसको खुशी से और दिल लगाकर करो कि गुरु के दिल में और ज्यादा मोहब्बत होगी जिसका तुम तो पड़ेगा और तुम भी मोहब्बत बढ़ेगी।

मोक्ष प्राप्ति के लिए अनिवार्य हैं इच्छाओं का त्याग

इंसान का मन एक बेजान चीज हैं। सूरत यानी आत्मा की धार चैतन्य और अजर अमर हैं। मन अपनी जीवन शक्ति इसी आत्मा की धार से लेता हैं और दुनिया की चीजों का आनन्द इंद्रियों द्वारा भोगता हैं। जैसे जैसे वह संसारी वासनाओं के आनंद में फंसता जाता हैं वैसे वैसे उन भोगों कि चाह बढ़ती जाती हैं। आत्मा मन का रूप धारण कर लेती हैं और मन के अधीन होकर जिधर वह ले जाता हैं उधर ही चली जाती हैं। मन दुनिया के सामान की तरफ दौड़ता हैं और आत्मा से शक्ति पाकर वासनाओं की तृप्ति करता हैं। एक वासना अनेकों वासनाओं को जन्म देती हैं और इस तरह अनेकानेक वासनाएं बन जाती हैं जिनकी तृप्ति इंसान के इस छोटे से जीवन में नहीं होती।

जब अंत समय आता हैं तो मन और शरीर नाश को प्राप्त होते हैं और आत्मा जो अविनाशी हैं वह अपने वर्तमान जीवन की अतृप्त वासनाओं की गठरी लिए हुए कर्मों के अनुसार दूसरा शरीर धारण करती हैं। जिस प्रकार की अतृप्त वासनाओं का भार ज्यादा होता हैं वैसे ही योनि में जन्म मिलता हैं। अगर इन्द्रिय भोग कि इच्छा प्रबल रही हैं तो सूअर या कुत्ते जैसे पशु योनी में जन्म पाता हैं, धन की लालसा हो तो सांप बन कर धन बनकर आ बैठता हैं। इसी प्रकार और भी योनियाँ ऐसी जगह मिलती हैं जहां पर उसकी पिछली ख्वाहिशें पूरी हो। उनमें से निवृत्ति पाकर बाकी इच्छाओं को पूरा करने के लिए दूसरी दूसरी योनियों में आत्मा शरीर धारण करती रहती हैं और इसी तरह आवागमन का अंत नहीं होता।

यदि सौभाग्य से मनुष्य का शरीर धारण करने पर जीव को कोई सच्चा और वक्त का पूरा गुरु मिल जाए जो सूरत को उलटकर अंतर या ऊपर की चढ़ाई का रास्ता समझा दे, या मन का घाट बदल दे तो जीव का कल्याण हो जाता हैं। और अगर मनुष्य उसके बताये हुए रास्ते पर

कायम रहे तो कम से कम एक जन्म वरना ज्यादा से ज्यादा पांच जन्मों में इस आवागमन के चक्कर से छुट जाता है।

मन के घाट से मतलब यह है कि मन दुनिया के किस चीज को चाहता है। जिस चीज को चाहता है उसी विषय में हर वक्त मन में ख्यालात उठते रहते हैं, यही मन का घाट कहलाता है। कंचन कामिनी और अहंकार यह तीनों चीजें मन को फसाने के लिए बड़े जबरदस्त जाल हैं, उलटफेर कर किसी न किसी रूप में यह तीनों चीजें मन में समाई रहती है और इंसान इन्ही के बारे में सोचा करता है। कंचन यानी धन से मतलब सिर्फ रुपए पैसे से नहीं है, संपत्ति से भी है जैसे मकान दुकान नौकरी आदि। इसके अलावा और चीजें जो रुपए पैसे से संबंध रखती है और जैसे मान बड़ाई इज्जत पद यह सब अहंकार के अंग है और धन के ही दायरे में आते है। इसी तरह स्त्री और उससे संबंधित विचार सब कामिनी के दायरे में जाती है।

सारा संसार ही इन तीनों के दायरे में नाच रहा है। अगर इन सब के या इनमें से किसी खास चीज के ख्याल आते हैं और मन हमेशा इन्ही के बारे में उधेड़बुन किया करता है तो उसने यहां अपना घाट बना लिया है। इस घाट को बदलना है अर्थात जहां-जहां और जिन जिन सांसारिक विषयों में फंसा है उन स्थानों और वस्तुओं से ऊपर निकलना होगा।

संत इसे ही घाट का बदलना कहते हैं। अगर यह घाट नहीं बदला गया तो मरते वक्त जब सूरज वापस लौटती है, बड़ी तकलीफ होती है। इसलिए महापुरुष अपने जीवनकाल में ही सूरत के उतार-चढ़ाव का इतना अभ्यास (प्रैक्टिस) कर लेते हैं कि उन्हें मरते वक्त कोई तकलीफ नहीं होती।

संत वचन भाग – १

परम संत महात्मा रामचंद्र जी महाराज कहते थे कि एक बार उन्होंने यह जानने की इच्छा हुई कि दुनियादार की मौत किस तरह होती हैं और संतों की किस तरह। उन्होंने स्वप्न में देखा कि उनके गुरुदेव आये। लकड़ी के दो तख्त जिन पर सफेद चादरें बिछी हुई थी। महात्मा जी को दिखाकर कहने लगे कि देखो, एक तख्त पर जो चादर बिछी हुई हैं उसमें हजारों छोटी-छोटी कीले ठुकी हुई हैं और उनके जरिए यह तख्त में जड़ी हुई हैं। उसे खींचकर उठाया तो उसके टुकड़े-टुकड़े उड़ गये। जहां जहां वे कीलें जड़ी थे वहीं वहीं अटकी और चीथड़े होकर वहाँ से उखड़ी।

उन्होंने फरमाया कि यह दुनियादार की मौत हैं। सूरत सफेद चादर हैं और कीलें उस दुनियादार कि अगणित इच्छाएं हैं जिनमें वह फंसी रहती हैं। मरते वक्त सूरत आसानी से उन इच्छाओं से इसी तरह नहीं निकल पाती जिस तरह यह चादर इन कीलों से नहीं निकली।

फिर दूसरे तख्त कि तरफ इशारा किया। तख्त में कीलों के ऊपर चादर थी उस चादर की सब कीलें निकल चुकी थी। उसे खींचा तो एकदम आसानी से बिना किसी रुकावट के चादर साफ खिंची चली आई। फरमाया कि देखो संत अपनी जिंदगी में ही समस्त इच्छाओं से इस तरह से अपने आप को उपराम (अलहदा) कर लेता हैं जैसे यह चादर कीलों से ऊपर आ गई। इसलिए मरते वक्त कोई तकलीफ नहीं होती।

कहने का आशय यह हैं कि सूरत को सारी इच्छाओं से पाक़ साफ करना होगा। उसे निर्मल बनाना होगा। परमात्मा से मिलने के सिवा और कोई ख्वाहिश दिल में बाकी ना रहे। यही मन को शांत करना हैं। लेकिन यह एकदम और ऐसी आसानी से नहीं हो जाता।

इसका तरीका है कि गुरु का सत्संग करना और गुरु की दया प्राप्त करना। वैराग्य सत्संग से पैदा होता है और आत्मा को शक्ति मिलती है। अभ्यास से मन का घाट बदलता जाता है। वह तम से रज और रज से सत पर आ जाता है। सत्संग से मन का मैल बराबर धुलता रहता है। गुरु दर्शन से, उनके चरणों में बैठने से, उनके वचन सुनने और उस पर अम्ल करने से मन का घाट बदलने लगता है। उनसे प्रीति करने से अहिस्ता अहिस्ता वह इश्वर कि प्रीति में तब्दील हो जाती है।

इस तरह से दुनिया में रहते और बरतते हुए ईश्वर प्रेम सब समय छाया रहता है और किसी में भी फंसावट नहीं होती है। इसलिए प्रीति और प्रतीति की जरूरत है। प्रतीति यह है कि केवल गुरु ही हमारे सच्चे हितैषी और शुभचिंतक हैं वह जो फरमाते हैं वह सब हमारे कल्याण के लिए ही है उसमें उनका अपना कोई स्वार्थ नहीं और यह कि वे अनुभवी पुरुष है, आत्मा का साक्षात्कार करा सकते हैं। प्रीति यह है कि उनकी हर एक बात को अपने हित की जानकार उस पर अमल करने की कोशिश करें, कोई भी काम ऐसा ना करें जिससे उनकी नाखुशी हो।

अपना सब कुछ उन पर न्योंछावर कर दे, हर वक्त उनके स्वरूप यानी उनकी शक्ल का या उनकी बताई हुई विधि का ध्यान रखें, तभी मन का घाट बदला जा सकता है। सत्संग में आकर बैठ जाना, वचन सुन लेना, और उन पर अमल न करना, समय का नष्ट करना है। इसे हाथ में कुछ भी नहीं हासिल हो सकेगा।

पहली कृपा दृष्टि में सद्गुरु अपनी दया जिव के अंदर प्रवेश कर देते हैं और वह दया बराबर आती रहती है। उसकी पहचान यह है कि मन संसार की किसी चीज में फंस भी जाता है तो वहाँ समझता नहीं, उसे वहाँ सुख और शांति नहीं मिलती और जी में एक उथल पुथल सी मची रहती है

जो उस चीज में फंसने से बचा लेती हैं और अपने असली आदर्श यानी परमात्मा, जो कि हमेशा का सुख और शांति का भंडार हैं उसकी तरफ मोड़ती हैं।

इस काम में मन को बड़ी मेहनत करनी पड़ती हैं। हरेक बंधन ढीला करना पड़ता हैं। बीमारी गरीबी और बेइज्जती को नियामत समझ कर सहन करना पड़ता हैं। इससे मन पर चोट पड़ती हैं और वह ढीला पड़ जाता हैं। यही तप हैं और सूरत शब्द का अभ्यास (या जो अन्य विधि गुरु ने बताई हो) वह जप हैं। इसी जब तप से इंसान अपने असली लक्ष्य तक पहुंच सकता हैं। श्री गुरुदेव सबका कल्याण करें

सागर का मोती

- जो कर्म किए हैं उसका फल अवश्य मिलता हैं। लेकिन अगर परमात्मा के चरणों का आसरा लिए हो तो कर्म आसानी से कट जाते हैं और आगे के संस्कार नहीं बनते।

ब्रह्मलीन महान-आत्माओं से आध्यात्मिक लाभ होता है या नहीं

यह सवाल बार-बार पूछा जाता रहा है और अब भी पूछा जाता है कि हमारे पूर्वज संत महात्माओं गुरुओं से क्या हमको कुछ फायदा पहुंच सकता है, या नहीं, और अगर हो सकता है तो किसको और किस प्रकार ? इस प्रश्न का सही उत्तर प्राप्त करने के लिए हम को कई बातों पर विचार करना आवश्यक है। प्रथम, जिन संत महात्माओं से लाभ प्राप्त करने की इच्छा है उनके विषय में हमारे अपने क्या विचार हैं। देहांत या मृत्यु के विषय में हमारी अपनी क्या विचारधारा है और वास्तविकता क्या है।

पहले हम मृत्यु पर विचार कर लेना चाहते हैं। मृत्यु देहांत को कहते हैं। देहांत का शाब्दिक अर्थ है देह का अंत हो जाना। देह वाले शरीर कितने प्रकार के हैं और उनका अंत कब और किस प्रकार होता है यह बात सर्वप्रथम विचारनीय है। हम मनुष्यों के तीन शरीर होते हैं – कारण, सूक्ष्म और स्थूल। स्थूल शरीर तमोगुण प्रधान यानी स्थूल तत्व (कसीफ माद्दे) का बना हुआ है। यह मन और आत्मा का निवास स्थान है।

आम लोगों का इस शरीर का अंत होता है और शेष दो शरीरों समेत जीव आत्मा इस शरीर को जब यह निर्जीव हो जाता है त्याग देती है या तो देहांत के पश्चात इसी भूमंडल में दो शरीरों के साथ विचरती रहती है और प्रेम आत्मा कहलाती है या पितृलोक को चली जाती है जिसे सूफियों में 'आलमे प्रवाह' कहते हैं। वहां वह या तो अपनी आखिरी ख्वाहिशों में घूमती रहती है और फिर इस मृत्युलोक में आकर कर्मों का फल भोगती है या देहांत के शीघ्र पश्चात ही दूसरा स्थूल शरीर धारण कर लेती है।

पहली दो हालतों में उनके संबंधियों को उनके फायदे या नुकसान पहुंचने की संभावना उनके विचार अनुसार होती है। तीसरा हालत में चूँकि वह तुरंत ही दूसरा शरीर धारण कर लेती है किसी प्रकार के फायदे या नुकसान का सवाल ही नहीं पैदा होता है।

दूसरा सूक्ष्म शरीर है। यह रजोगुण प्रधान है। और सूक्ष्म तत्व लतीफ माद्दे) का बना हुआ होता है। सगुनोपासक भक्त तथा योगियों के देहांत के समय स्थूल और सूक्ष्म शरीर दोनों का अंत हो जाता है। और जीवात्मा कारण शरीर सहित इन दोनों शरीरों का त्याग कर देती है। ये आत्माएं सीधी ब्रह्मलोक को चली जाती है और वहाँ ठहर कर अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहती है। इन आत्माओं में भी उनके संबंधियों को जिन्होंने इनके मृत्यु के पूर्व इन से मानसिक संबंध स्थापित कर लिया है और जो इन आत्माओं की तरफ आकर्षित होते हैं, फायदा पहुंच सकता है, और पहुंचता है।

तीसरा कारण शरीर है। यह सतोगुण प्रधान है। वह सुक्ष्ममती सूक्ष्म (लतीफ़तर) तत्व का बना हुआ है और अलौकिक होता है। संत महात्माओं के देहान्त के समय आत्मा तीनों शरीर को त्याग कर अपने असल भंडार में समा जाती है। ऐसी आत्माएं अपने अध्यात्मिक सन्तान को हर समय फैज्याब लाभान्वित करती रहती है। जिन्होंने जिंदगी में उनकी दया और कृपा से उनसे आध्यात्मिक संबंध स्थापित कर लिया है, जब भी ऐसी महान आत्माओं की तरफ मदद के लिए दुआ मिन्नत और प्रार्थना करते हैं फौरन उनकी तरफ आकृष्ट हो जाती है और सहायता पहुंचती है।

उपर के वर्णन से यह बात साफ़ तौर पर ध्यान में आ गई कि हमको अपने विगत पूर्वजों से हमारी धारणा और पहुँच के अनुसार फायदा पहुंच सकता है। धारणा और पहुंच का तात्पर्य यह है कि यदि हमारी धारणा है कि हमारे पूर्वज मामूली मनुष्य थे ओए देहांत के पश्चात उन्होंने दूसरा शरीर धारण कर लिया है तो हमने अपनी तरफ से फायदा पहुंचने का रास्ता बंद कर लिया है। अब

फायदा पहुंच कैसे सकता है ? दूसरे यह कि यदि हमारी पहुंच ब्रह्मलोक तक ही है तो उन पूर्वज आत्माओं तक जो इस समय ब्रह्मलोक में हैं हमारी पहुंच ही संभव नहीं है फिर हम उनसे फायदा कैसे प्राप्त कर सकते हैं ? और यदि हमारी पहुँच ब्रह्मलोक तक हो भी पाई है तो उन पूर्वजों से जो अपने असल में समा चुके हैं हमारी पहुंच कब और कैसे संभव हो सकती है। जब हमारी अपनी पहुंच उन तक नहीं है तो हम उनसे राह चलते अकस्मात फायदा नहीं उठा सकते हैं। वे यदि स्वयं ही हमारे हाल पर रहम खा कर कृपा करें तो यह बात दूसरी है।

सागर का मोती

- मंजिल चीजों का आदी होते हो जाता है उसको आसानी से नहीं छोड़ता उनका चिंतन करता रहता और मौका मिलने पर आप बुरा समझते हैं कोशिश कीजिए।

मानव जीवन का आदर्श

जिंदगी का आदर्श ईश्वर से मिलकर एक हो जाना है। जब ईश्वर के तमाम गुण (जो कुछ भी दुनिया में भले और बुरे दिखाई देते हैं) गुप्त अवस्था में रहते है, वही उसका निर्गुण रूप है यानी United Form है और जब उनका इजहार होता है (प्रकट होते हैं) तो वही गुण जो गुप्ता अवस्था में थे जाहिर हो जाते है। यह साकार Diversity (अनेकता) है। लाखों और सारे अनगिनत रूपों में एक ईश्वर का ही सगुण रूप वर्तमान है। यहां पर निराकार साकार रूप में यानी Unity & Diversity में एक ही शक्ति काम कर रही है। जब उसके अनेकानेक रूप जाहिर होती है यही दुनिया की उत्पत्ति है और निर्गुण के सगुण रूप में आना है। दूसरी तरफ तमाम गुण जहां से निकले थे जब वही समा जाते है तो कह सकते हैं कि यहीं प्रलय है।

हरेक प्राणी में जो भी दुनिया में मौजूद है या आएंगे उस परमेश्वर का एक-एक गुण विशेष रूप से मौजूद होता है जो स्वभाविक है (जैसे शेर में खुंखारी,सांप में गुस्सा हिरन में रागों का प्रेम भौरें में सुगंध पर आसक्ति, कोयल में सोज, इत्यादि इत्यादि।) और वह जिन्दगी के स्वभाविक तौर पर उसी गुण कि तरफ झुकता है। थोड़ी देर के लिए दबाव से या कोशिश से वह दबाया जा सकता है, लेकिन चूँकि उसका स्वभाव ही ऐसा है इसलिए फिर उसी तरफ को लौटता है। जैसे कुत्ते की दुम कितनी ही सीधी करो, जब छोड़ोगे टेढ़ी ही रहेगी।

आदमी इस वजह से अशरफुल मख्लुकात सृष्टि में सर्वश्रेष्ठ प्राणी) कहलाता है कि ईश्वर के जितने गुण , चाहे वह अच्छे कहे जाएंगे या बुरे उसमें स्वभाविक तौर पर आ जाते हैं। वह गुण देवताओं के से भी हो सकते हैं और शैतान के से भी। लेकिन इसके साथ ही साथ उसको Consciousness (बुद्धि) भी दी गई है जिससे वह बुराई और भलाई में तमीज कर सके और उसके

परिणाम को ध्यान पूर्वक समझ सके। मनुष्य इस बात के लिए स्वतंत्र है कि गुणों को जितना चाहे उभारे और उसके मुताबिक अपनी जिंदगी बसर करें। लेकिन उसके साथ ही प्रकृति का यह अटल नियम लगा हुआ है कि जैसा करेगा वैसा भरेगा।

जब इंसान दुनिया में पैदा होता है उस वक्त न उसमे रगबत होती है न नफरत (न राग है न द्वेष) लेकिन जिन चीजों से उसको आराम मिलता है अहिस्ता अहिस्ता उनको अपनाता जाता है, जिन आदमियों से उसको सुख मिलता है उनसे मुहब्बत करता है और जिन चीजों से उसको दुःख पहुँचता है तथा जिन आदमियों से उसको नुक्सान पहुँचता है उनसे नफरत करने लगता है और दूर भागता है। जिन वस्तुओं को अपनाता है और आदमियों से सुख पहुँचता है उनसे प्रेम करने लगता है और उनको अपना समझने लगता है। जिन वस्तुओं से भागता है और जिन मनुष्यों से उसे दुःख पहुँचता है उनसे घृणा करने लगता है और दूर रहता है।

इस तरह प्रेम और घृणा के दोनों आवरण उसकि आत्मा पर चढ़ जाते हैं और जब तक यह दोनों आवरण बने रहते हैं तब तक आत्मा इस दुनिया में बार-बार जन्म लेती है और मरती है और दुख सुख भोगती रहती है। शैतानी स्वभाव मनुष्य को नीचे की ओर खींचता है जिसके प्रभाव से कभी वह पशु योनि में जाता है और दैवी-स्वभाव के प्रभाव से देवलोक को पहुंचता है। यह क्रम बराबर चलता रहता है। जब मनुष्य इस आवागमन के चक्र से बहुत परेशान हो जाता है तब उसकी इच्छा होती है कि मैं जंजाल से छूट जाऊं। जब उसकी यह इच्छा तीव्रता की सीमा को पहुँच जाती है यब मालिक की रहम की शक्ति और दयालुता का गुण मनुष्य रूप में देह धारी गुरु के स्वरूप में प्रकट होता है। जो मनुष्य को तम, रज और सत तीनों गुणों से निकालकर आत्मा का साक्षात्कार करा देता है।

आत्मा के साक्षात्कार होने के बाद वह भले और बुरे ख्यालों में नहीं फंसता। उनसे ऊचा हो कर वह ईश्वर के ध्यान में मग्न रहता है और अपनी स्थिति के अनुसार तीनों गुणों में कार्य करते हुए सबसे अलग थलग रहता है। जिस प्रकार उसका इष्ट सारे कर्म करता हुआ और गुणों में बरतता हुआ उनसे अलहदा रहता है। यही उसका निर्वाण है। जब तक वह जीवित रहता है ईश्वर का सगुन रूप हो कर दुनियां कि देख भाल और सेवा करता है। मरने पर ईश्वर के निर्गुण रूप में समा जाता है। यही मोक्ष है और यही उसका आदर्श है , लक्ष्य है।

असली तप यही है कि अभ्यास द्वारा सत्संग की मदद से अपनी तमाम शक्तियों को एकत्र किया जाए और अपने स्वाभाविक गुणों पर काबू पाकर समयानुसार उन का प्रयोग किया जाए लेकिन अपने आप को इससे अलग रखा जाए। यह तभी हो सकता है जब जीव् गुणों से न्यारा होकर काबू में लाकर उन पर पूरा अधिकार प्राप्त कर के, अपनी आत्मा को ईश्वर में लय कर दे। यही संतों का परमार्थ है। इस को प्राप्त करने के लिए जो कुछ भी किया जाता है वह सब साधन और जरिये हैं जैसे देवताओं की पूजा, अवतारों की पूजा, गुरु की पूजा, या तरह-तरह के अभ्यास असली लक्ष्य ईश्वर के रूप को जानना है। यही मनुष्य के जीवन का आदर्श है ।

सागर के मोती

(परमसंत महात्मा श्री कृष्ण लाल जी के सुवचन)

- औरों की निंदा भूलकर भी ना करो यह संतों और महात्माओं का कतई उक्म हैं। बुराई करने वाला परमार्थ का अधिकारी नहीं हो सकता।
- दूसरों की निंदा या अवगुणों का बखान करने से दूसरों की बुराई अपने में प्रवेश कर जाती हैं और आदमी अपने लक्ष्य से बहुत दूर जा पड़ता हैं। यह बहुत बुरी आदत हैं इससे हमेशा दूर रहना चाहिए।
- गुरु या मालिक तमाम खूबियों का केंद्र हैं भंडार हैं। चुकी यह इच्छित लक्ष्य हैं इसलिए जितनी भलाइयों को तुम समझ सकते हो और जिनको तुम नहीं समझ सकते वो सब उसमें हैं और उनकी तारीफ करने से वह तुम्हारी तरफ खिंचने लगेगी।
- स्तुति और प्रार्थना सदा अपनी मातृभाषा में करनी चाहिए और उसके शब्द भी वही हो जो दिल से निकले। दूसरी भाषा में पढ़े हुए शब्दों में प्रार्थना करने से वह फायदा नहीं होता जो होना चाहिए। मंत्रों का जाप मूल भाषा में ही करना चाहिए, जिसमें वह लिखे गये हो ।
- निंदा अपने ऐबों (दोषों) की की जाती हैं। कभी भूल कर भी अपनी निंदा मत करो, तुम तो ईश्वर के अंश हो, तुममें बुराई कैसी ? अगर तुम बुरे हो तो वह भी बुरा हैं और जब वह गुणों का भंडार हैं तो तुम बुरे कैसे हो सकते हो। निंदा भी सिर्फ शुरू में की जाती हैं कि तुम पाक साफ हो जाओ और जब तुम पवित्र बनने लगो तो अपने को सराहो और गुरु या मालिक को धन्यवाद दो जिसने तुम को अपनी शरण में ले लिया।

रामाश्रम सत्संग (रजि.) के आध्यात्मिक प्रकाशन

1.	फकीरी की सात मंज़िलें (संत उपदेश-दर्शन)	रुपये	6.00
2.	जीवन चरित्र : पूज्य महात्मा रामचन्द्रजी महाराज	"	10.00
3.	हमारे उनकी जीवनी पू. श्रीकृष्ण लालजी महाराज	"	10.00
4-5	अमृत रस (भाग 1 व 2) प्रत्येक	"	10.00
6-8	Discourses on Hindu Spiritual Culture - by Rev. Dr. A.K. Banerji (Part 1,2 & 3 each)	"	50.00
9	गुरु शिष्य सम्वाद	"	6.00
10	संत वचन (भाग-1, तीसरा संस्करण)	"	10.00
11-15	संत वचन (भाग-2-6, प्रत्येक)	"	6.00
16	संत वचन (भाग-7)	"	10.00
17-18	बातचीत (भाग 1 व 2)	"	5.00
19	अभ्यास में मन न लगने के कारण व उपाय	"	6.00
20	पत्रमार्ग	"	6.00
21	साधन चतुष्टय	"	2.00
22-24	संत प्रसादी (भाग-1 से 3 प्रत्येक)	"	6.00
25-26	संत प्रसादी (भाग 5 व 6 - प्रत्येक)	"	7.00
27-29	संत प्रसादी (भाग 6, 7 व 8 - प्रत्येक)	"	10.00
30	आराधना (सत्संग की प्रचलित प्रार्थनाएं)	"	4.00
31	भजन मंजूषा (51 संत भक्त कवियों की रचनाएं)	"	8.00
32	भावांजलि (पू. डा. श्रीकृष्ण लालजी की जन्मशती पर)	"	15.00
33	प्रेम का सूर्य (पूज्य डा. श्रीकृष्ण लालजी की जन्मशती पर)	"	17.00

प्राप्ति स्थान : भंडारा समारोहों में एवं

मैनेजर, राम संदेश, 9 रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,

गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

सम्पादक, राम संदेश, 2-बी, नीलगिरि-3, सैक्टर-34,